अंदेशों के गिरफ़्तार

माइल ख़ैराबादी

अनुवादक
कौसर लईक़

विषय-सूची

समर्पण

अंदेशों के गिरफ़्तार के नाम !

—माइल ख़ैराबादी

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम ।
('अल्लाह' के नाम से जो अत्यन्त कृपाशील, दयावान है ।)

ईश्वरीय प्रकोप

[यह अरबी भाषा की एक बेहतरीन कहानी है । इसमें संशोधन और वृद्धि करने के बाद, ख़ास तौर से एक पात्र बढ़ाकर, इसे उर्दू में प्रकाशित किया गया था । अब इस किताब का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित किया जा रहा है ।]

वे जल्द-से-जल्द शहर में पहुँचकर आम सभा में शामिल होना चाहते थे । उन्होंने सोचा था कि शाम तक शहर पहुँच जाएँगे । शहर के अमीर के यहाँ दावत खाएँगे । रात के शांत वातावरण में आराम करके सफ़र की थकान दूर करेंगे फिर दूसरे दिन कार्यकर्त्ताओं की एक विशेष सभा में अपने क्षेत्र मध्य-पूर्व की तब्लीग़ (धार्मिक प्रचार सम्बन्धी सरगर्मियों) की रिपोर्ट प्रस्तुत करेंगे । अपने पिछले कार्यक्रमों का जायज़ा लेंगे और आनेवाले समय के लिए प्रोग्राम बनाएँगे । मध्य-पूर्व के कुल चालीस प्रतिनिधि थे जो मोरक्को[1] में होनेवाले एक विशाल ईसाई सम्मेलन में भाग लेने जा रहे थे । उनके साथ एक बूढ़ी सेविका भी थी जिसे उन्होंने उसके अनुरोध पर साथ ले लिया था ।

चलते-चलते उन्होंने महसूस किया कि दोपहर के बाद सूरज की गति सामान्य से कुछ ज़्यादा ही तेज़ हो गई है । उन्हें अंदेशा हुआ कि शाम तक शहर न पहुँच सकेंगे, सिवा इसके कि सब तेज़ चलें— सफ़र के अमीर ने सब को तेज़ चलने का हुक्म दिया । धीरे-धीरे क़ाफ़िले ने अपनी रफ़्तार बढ़ाने में पूरी शक्ति लगा दी ।

बूढ़ी सेविका भी पीछे-पीछे सब के साथ थी । उसके लिए मुश्किल यह थी कि वह कई प्रचारकों का सामान सिर पर लादे थी । वह बार-बार बहुत पीछे रह जाती और उसके लिए सबको कुछ पल के लिए ठहर जाना पड़ता । वे दिल में तो बहुत खुश होते कि चलो इसी बहाने सुस्ताने और दम लेने के लिए कुछ मौक़ा मिल जाता है, लेकिन जब अमीर बुढ़िया को डाँटता तो सभी अपने अमीर के सुर में सुर मिलाकर उस बुढ़िया को बुरा-भला कहने लगते । बुढ़िया उन्हें दुआएँ देती और पीछे-पीछे घिसटती जाती ।

---

1. अफ़्रीक़ा का एक प्रसिद्ध प्रदेश——अनुवादक

इस तरह सब मराक़श की तरफ़ बढ़ते जा रहे थे । अस्र के वक़्त अचानक सभी ने एक अजीब-सी भयानक आवाज़ सुनी । सभी धर्म-प्रचारक घबरा गए । फिर एक ज़बरदस्त धमाका हुआ । उन्होंने उसे भूकम्प समझा । उन्हें ऐसा महसूस हुआ जैसे ज़मीन ने घूमते-घूमते अपनी धुरी छोड़ दी हो । ज़मीन की यह दशा केवल कुछ देर तक ही रही । इन भयानक लहरों के बीत जाने के बाद सभी ने देखा कि सूरज की चमक-दमक मंद पड़ने लगी । झुलसा देनेवाली हवा के तेज़ झोंके सर्द होने लगे । देखते ही देखते बादल घिर आए, फिर अँधेरा इतना बढ़ा कि रास्ता चलना दूभर हो गया । अमीर ने हुक्म दिया कि इस अज़ाब से बचने के लिए सामनेवाली इबादतगाह, जो अब खण्डहर बन चुकी है, में पनाह लो । आदेश पाते ही सभी लोग उसी ओर लपके और किसी न किसी तरह इबादतगाह की एक कोठरी में घुस गए । मुड़कर देखा तो महसूस किया कि जैसे सारा ब्रह्माण्ड अटलांटिक महासागर में डूबा जा रहा है ।

इसके बाद काली घटाओं के ग़ौल पूरे आसमान पर छा गए, फिर बूंदाबान्दी शुरू हो गई और फिर मूसलाधार वर्षा होने लगी । घनघोर घटाओं में बिजलियों की कड़क और चमक और बादलों की दिल हिला देनेवाली गरज पैदा हो गई । बिजलियाँ इस तेज़ी से चमकने लगीं जैसे आसमान पर अज़ाब के फ़रिश्ते तलवारें चमका रहे हों ।

सभी धर्म-प्रचारक इबादतगाह के कोनों में दुबक गए । बुढ़िया को दरवाज़े के सामने जगह मिल गई । वह काँपती हुई अपने सामान के बीच बैठ गई । घुटने खड़े करके दोनों हाथों से इस तरह से जकड़ लिया कि वह ख़ुद एक गठरी-सी बन कर रह गई । अँधेरा ऐसा था कि कोई किसी को देख न सकता था, सिवाय इसके कि बिजली चमकती तो वे एक-दूसरे को देख लेते ।

कुछ देर के बाद अमीर ने चक़माक़ (एक आग देनेवाला पत्थर) से रौशनी जलाई । उसने कोई वज़ीफ़ा (मंत्र) होठों ही होठों में पढ़ा और अपने पूरे साधुतापूर्ण गुरुता के साथ बोला—

"मेरे मसीही भाइयों ! न तो यह जंगल की आँधी है, न रेगिस्तानी बारिश और न यह साधारण तूफ़ान है । देखो, मुझ से कोई कह रहा है कि चमकनेवाली ये भयानक बिजलियाँ, ये गड़गड़ानेवाले दनदनाते और दिल दहला देनेवाले बादल और इस अटलांटिक महासागर से ज़्यादा काली यह रात, सबके सब मिलकर क़ुदरत की बदला लेनेवालीं कठोर प्रतिक्रिया को ज़ाहिर कर रहे हैं । मसीही भाइयो ! यह ईश्वरीय प्रकोप है । ख़ुदा का भेजा हुआ क़हर है । आसमानी अज़ाब है, जो हम पर उतारा गया है । हम चालीस में से ज़रूर कोई गुनहगार है जिसके गुनाहों

के कारण आसमानी अज़ाब नाज़िल किया गया है । बताओ, हम में वह कौन गुनहगार बन्दा है ?"

अमीर की यह बात सुनकर सब रोने लगे और अपनी जगह सिमट गए । उसने फिर गरज कर कहा, "आसमानी अज़ाब तुम्हारे रोने से टल नहीं सकता । बताओ, हम में से कौन गुनहगार है ? देखो, दुष्ट आत्माएँ उसके गुनाहों पर क़हक़हे लगा रही हैं । मौत की प्यासी बिजलियाँ उस गुनहगार का ख़ून पीने के लिए बेचैन हैं । ज़रूर हम में से कोई गुनहगार है, जिसे सज़ा मिलनी चाहिए । देखो, सुनो ! मेरा फ़ैसला यह है कि हम में से हर एक को बारी-बारी मैदान में जाना होगा । इस उपासना-गृह की परिक्रमा करनी होगी और फिर वह सामनेवाला कूआँ छूकर आना होगा, ताकि जो गुनहगार अल्लाह के प्रकोप का दोषी हो, मौत उसे आ दबोचे और बाक़ी सुरक्षित रहें, नहीं तो केवल एक गुनहगार के कारण हम सब को अज़ाब का निशाना बनना होगा । ख़ुदा का क़हर हम सब पर नाज़िल होगा । मौत हम सबको नष्ट कर देगी । बताओ पहले कौन इबादतगाह से बाहर जाएगा ?"

धर्म प्रचारकों का नेता सबको ग़ौर से देखने लगा । कुछ देर के बाद बोला, "तुम सबको अपनी जानें प्यारी हैं । अच्छा लो, सबसे पहले मैं जाऊँगा, और देखो, मेरे पैरों के पास मेरा बिस्तर है, अगर मैं इस अज़ाब की नज़र हो जाऊँ, तो यह बिस्तर मेरे वारिसों तक पहुँचा देना । यह मेरी वसीयत है कि इसे खोला न जाए और देखो मैं तुमको गवाह बनाता हूँ—ख़ुदा ने मुझे जो ज्ञान दिया था, मैंने उसे फैलाने में अपनी पूरी ज़िन्दगी लगा दी । आज तुम सारी मसीही दुनिया में मेरा नाम बच्चे-बच्चे से सुन सकते हो । क्या तुम मेरी इस बात की गवाही देते हो ?" वह दूसरे मुबल्लिग़ों (धर्म-प्रचारकों) की तरफ़ देखने लगे ।

"ऐ हमारे आसपास के पवित्र पिता ! आप वास्तव में ऐसे ही हैं । ख़ुदा और ख़ुदा का बेटा आप को इस प्रकोप से सुरक्षित रखे ।" सभी ने गवाही देने के साथ दुआ के लिए हाथ उठाए । प्रधान धर्म-प्रचारक "या मसीह !" का नारा लगाता हुआ उपासना-गृह से बाहर गया और अँधेरी रात में गुम हो गया । कोठरी में सिमटे हुए लोग ख़ुदा जाने क्या दुआ कर रहे थे । इन क्षणों में जब बिजली चमकती तो उस क्षण भर की रौशनी में सब बाहर की ओर देखने लगते । एक बार सबने देखा कि सफ़र का अमीर इबादतगाह की परिक्रमा करके कुएँ की तरफ़ बढ़ता जा रहा है । इसके बाद सभी ने डर के मारे आँखें बन्द कर ली थीं, क्योंकि बिजली चमकने के बाद एक ज़बरदस्त कड़ाके और बादलों की गरज से ज़मीन के साथ उनके दिल भी हिल गए थे । पूर्व से पश्चिम तक आसमान में हलचल पैदा करके बिजली कूएँ के पास से गुज़र कर वातावरण में समा गई । इसी क्षण

एक साया ने "या मसीह !" का नारा लगाया, कुएँ को छुआ और भीगता-भागता इबादत गाह में दाख़िल हुआ । सबने देखा कि अमीर का चेहरा चमक रहा था और उसके चेहरे से मासूमियत का नूर टपक रहा था । सभी साथी उसके भीगे दामन से लिपट गए और जिसे जो हिस्सा मिला उसे चूसने और चूमने लगे ।

अब अमीर ने अपने नायब को हुक्म दिया, "उठो ! अब तुम्हारी आज़माइश की बारी है ।" ईसाई अपने पवित्र पिता का आदेश किसी हाल में टाल नहीं सकते थे । नायब काँपता-थरथराता और रोता हुआ उठा । उसने कहा, "मेरे मसीही साथियो ! तुम सभी जानते हो मैं पवित्र इंजील के भाग-13, अध्याय "इब्नुल्लाह" का हाफ़िज़ हूँ । तुम सब गवाही दोगे कि मैं इसका एक अकेला हाफ़िज़ हूँ । जिस वक़्त तुम आसमानी आवाज़ें सुनना चाहते हो, मैं उस वक़्त कलामे इलाही (ईश्वरीय वाणी) सुनाकर आनंदित करता हूँ । मैंने इसमें कभी कंजूसी से काम नहीं लिया । मेरी क़िर्अत (सस्वर एवं लयात्मक पाठ) की गवाही मसीही दुनिया में हर गली-कूचे की हर ईंट और हर ज़र्रा दे रहा है । क्या तुम भी गवाह हो ?"

"बेशक, हम सब गवाह हैं," सभी ने कहा ।

"अच्छा तो अब मेरी वसीयत सुनो ! तुम मेरे बाद मेरा सामान ले सकते हो, लेकिन मेरे सामान में एक काला बटुआ है । उसे तुम नहीं खोलना। यह बटुआ तुम वापसी के बाद मेरी तलाक़शुदा बीवी उम्मुल नहास को दे देना ।"

इस वसीयत के बाद नायब दुआओं का मंत्र ज़बान से अदा करता हुआ इबादत गाह से निकल गया और सबकी नज़रों से ओझल हो गया । घनघोर घटाएँ अब भी पूरे धमाकों के साथ गरज रही थीं । बिजलियाँ चमककर आँखों की रौशनी पर डाका डाल रही थीं । एक बार बिजली की चमक में सभी ने देखा कि नायब इबातदगाह की परिक्रमा के बाद कुएँ की तरफ़ बढ़ रहा है । बिजली की चमक के बाद सिर्फ़ साया महसूस हुआ । यह साया कुएँ के पास पहुँचा ही था कि बिजली कड़की, चमकी, गिरी और कुएँ के पास से गुज़र कर अँधेरे वातावरण में खो गई । नायब बाल-बाल बच गया ।

उसके आने के बाद अमीर ने एक राहिब (संन्यासी) को आदेश दिया कि वह इसी क्रिया को दोहराए । राहिब (संन्यासी) सिर से पैर तक एक चादर से लिपटा हुआ था । उसने कहा, "आप सब जानते हैं और ख़ुदा भी जानता है कि मैं एक बहुत बड़े व्यापारी का बेटा हूँ । मैंने ईसाई धर्म की ख़ातिर दुनिया की दौलत पर लात मार दी और सब कुछ त्याग कर इस मिशन में शामिल हुआ और फिर मैंने आराम और सुख की सूरत नहीं देखी । क्या आप मेरे इस काम के गवाह हैं ?"

"हम सब गवाह हैं," यह गवाही लेकर राहिब (संन्यासी) भी मौत से लड़ने के लिए निकला और उसी तरह ज़िन्दा और सलामत वापस आया, जिस तरह उससे पहले उसके पेशवा वापस आए थे । इसके बाद एक-एक करके सारे धर्म-प्रचारक इस कठोर आज़माइश से दोचार हुए और सब के सब कामयाब हुए । सफ़र का अमीर हैरान रह गया कि फिर क्या बात है कि यह तूफ़ानी अज़ाब हम लोगों को घेरे हुए है । "अब तो कोई बाक़ी नहीं रहा ?" उसने अपना सवाल सबके सामने प्रस्तुत किया । उसी वक़्त फिर बिजली चमकी । सभी ने देखा कि दरों के सामने बुढ़िया गठरी बनी काँप रही है ।

"यह है वह गुनाहगार, शीघ्र इसे दूर करो," कई आवाज़ें कोठरी में गूँजी और सफ़र के अमीर ने भी साथ दिया । वह गरजा—"ओ दुष्टात्मा की सन्तान ! तेरा ख़याल ही न रहा । साथियो ! यही है हव्वा की वह बेटी जो अल्लाह के अज़ाब का कारण है, हमें इसे साथ नहीं लाना चाहिए था । ओ साँप की संतान ! ऐ शैतान की एजेंट ! ऐ मर्द की सबसे बड़ी कमज़ोरी ! ऐ आदम को जन्नत से निकलवानेवाली ! निकल हमारे बीच से ।" और फिर अमीर ने बुढ़िया को एक ठोकर लगाई ।

"ऐ पवित्र पिता और ऐ पुण्यात्माओं के नमूनो ! हाँ, मुझे स्वीकार है कि मैं गुनहगार हूँ । मेरी सारी उम्र गुनाहों में गुज़री, लेकिन मैंने तोबा कर ली है और आपके पाक शरण में इसलिए आई हूँ और आपके पाक सायों से इसलिए चिमटी हूँ कि ख़ुदा मुझे पाक कर दे । मसीह के सदक़े ! मुझे अपने मुबारक साए से अलग न कीजिए । आपके सहारे ज़िन्दगी की कुछ साँसें इस दुनिया की और हासिल कर लूँ ।"

"नहीं, हरगिज़ नहीं ! हम सब तेरी वजह से ख़ुदा का अज़ाब मोल नहीं ले सकते ।"

अमीर के हुक्म पर बुढ़िया उसके पाँवों से लिपटकर दुहाई देने लगी। "ऐ पवित्र पिता ! मुझे पूरा यक़ीन है कि मैं ज़िन्दा और सुरक्षित वापस नहीं आ सकती और न मुझ में इतनी हिम्मत है कि आपके आदेश को टालकर आख़िरी और सबसे बड़ा गुनाह अँजाम दूँ । मैं आप का हुक्म बजा लाऊँगी । मेरी वसीयत सुन लीजिए । मैंने तौबा के बाद सूत कातकर कुछ रक़म बचाई है । इस रक़म को मराकश पहुँचकर आम सभा में ख़ैरात करना चाहती थी । आप मेरी रक़म क़बूल फ़रमाएँ ।"

और यह कहकर बुढ़िया ने कुछ सिक्के पवित्र पिता के क़दमों में डाल दिए, फिर वह निहायत सुकून से उठी और अँधेरे में खो गई । बिजलियों की चमक और कड़क में दस गुना बढ़ोत्तरी हो गई, ज़मीन फिर हिली और ज़मीन और आसमान

दोनों एक साथ काँपने लगे । धमाकों की आवाज़ क्षण प्रतिक्षण बढ़ने लगी । मालूम होता था कि आसमान जहन्नम के गोले ज़मीन की तरफ़ फेंक रहा है । बिजली की एक चमक में सभी ने देखा कि बुढ़िया ने भी अपनी परिक्रमा पूरी कर ली थी, फिर अँधेरे में उसका साया कुएँ की तरफ़ बढ़ता नज़र आया । जैसे ही बुढ़िया ने कुएँ को छुआ, आसमान के सीने में बिजलियों का तूफ़ान चमक उठा । इतनी भयंकर आवाज़ से बादल गरजा कि सारी ज़मीन हिल गई । सभी ने कानों में उँगलियाँ दे लीं । "उफ़ गुनहगार औरत !" सबकी ज़बान से निकला । बिजली ज़ोर से चमकी, तड़पी और लहराई । बुढ़िया ने अपना सिर कुएँ की दीवार पर रख दिया, "ऐ आसमानों के मालिक ! एक हक़ीर (तुच्छ) जान क़बूल कर ले और अपने प्यारे बन्दों को भय और व्याकुलता से बचा ले !"

एक ज़बरदस्त चमक फिर हुई । इस बिजली की चमक में सारा ब्रह्माण्ड रौशन हो गया और फिर आसमान पर बिजली की एक लम्बी-सी लहर चमक कर ज़मीन की तरफ़ चली । साथ ही, हज़ारों कड़कों से ज़्यादा भयानक एक कड़क हुई । एक तेज़ शोला-सा उठा, बिजली अपनी पूरी भयंकरता और भीषणता के साथ बुढ़िया के सिर पर चमकी । बुढ़िया लड़खड़ाकर गिरी । इसके साथ ही इबादतगाह से एक दर्दनाक चीख़ उठी । बिजली गिरकर ज़मीन में समा गई ।

देखते-देखते बादल छँट गए, पानी बरसना बन्द हो गया । अँधेरा छूमंतर हो गया । आसमान पर धुली हुई चाँदनी दौड़ गई । चाँद चमकने लगा और.....और.....और.....यह क्या ? बुढ़िया होश में आ गई । वह उठी और इबादतगाह की तरफ़ वापस होने लगी । मगर उसकी चीख़ निकली, "ओ ख़ुदा ! वह इबादतगाह कहाँ गई ! वे पुण्यात्मा बन्दे कहाँ चले गए । उफ़ मेरे ख़ुदा ! इबादतगाह की जगह यह भयानक ग़ार" वह फिर बेहोश होकर गिर पड़ी ।

बुढ़िया जब सुबह होश में आई तो उसने देखा कि मराक़श के लोग उसे घेरे हुए हैं और पूछ रहे हैं कि तू कौन है ? क्या तूने चालीस पवित्रात्मा धर्म-प्रचारकों के क़ाफ़िले को कहीं देखा है ? वे जल्द ही मिलनेवाले थे ।

बुढ़िया हक्का-बक्का, सबके चेहरे तक रही थी । वह बोल न सकी । उसने उँगली से इशारा किया, जिसका मतलब यह था— "यहाँ एक इबादतगाह थी, सब इसमें ठहरे हुए थे । मालूम नहीं इबादतगाह के साथ वे सब कहाँ चले गए । क्या तुम बता सकते हो ?"

कहते हैं कि उसी दिन आम सभा में एक वक्ता ने अपने भाषण में कहा—

"वे चालीसों मर्द पाखण्डी थे और ईश्वर के आदेशों के अनुसार कर्म नहीं करते

थे । ख़ुदा ने उस औरत की वजह से उन्हें उस समय तक सुरक्षित रखा जब तक उन्होंने उस औरत को अलग नहीं किया था। उन्होंने जैसे ही उस औरत को अपने से अलग किया ख़ुदा का प्रकोप उन पर आ गया । लोगो ! मर्द जब औरत को ज़मीन पर अकेला छोड़ देगा और उसकी सुरक्षा नहीं करेगा तो वह आसमानी अज़ाब का शिकार हो जाएगा ।"

अंदेशों के गिरफ़्तार

मसीता साईं तकिया करामत शाह में इशा के वक़्त तक रहता था। इशा के बाद वह अपने गाँव चला जाता और फिर सुबह की नमाज़ तकिया की मस्जिद में आकर पढ़ता था। जब तक वह तकिया के अहाता में रहता, दरूद और वज़ीफ़े पढ़ने में लीन रहता, जो लोग (श्रद्धालु) करामत शाह के मज़ार पर फ़ातिहा पढ़ने आते, मसीता साईं से ज़रूर मिलते। मसीता साईं उनको धार्मिक बुज़ुर्ग हस्तियों की करामतें-मिसालों और कहानियों के अन्दाज़ में सुनाया करता और फिर जब इशा के बाद घर जाता तो अपनी बीवी को भी सुनाता। औरतों में धार्मिक रुझान होते ही हैं। मसीता की बीवी बड़े शौक़ से सुनती, याद रखती और जब सुबह मसीता अपने तकिए पर चला जाता तो वह दूसरी औरतों को वही मिसालें और कहानियाँ सुनाती। औरतें इन कहानियों से बड़ी नसीहत हासिल करतीं और जहाँ तक उनसे होता धर्म की बुज़ुर्ग हस्तियों की शिक्षाओं पर चलने की कोशिश करतीं। मसीता साईं की बीवी फ़ातिमा का कहना था कि इन छोटी-छोटी क़िस्सों को सुनने का मतलब सिर्फ़ यह नहीं है कि उनसे मज़ा लिया जाए, बल्कि जो कुछ सुना जाए, उससे अपनी ज़िन्दगी सँवारी जाए। उसकी याद्दाश्त भी अच्छी थी। मसीता साईं तो अपनी कही कहानियाँ और वृतांत भूल जाता या नहीं भूलता तो रोज़मर्रा के कामों में व्यस्त होने के कारण उन्हें नज़रअन्दाज़ कर देता। लेकिन फ़ातिमा चूँकि एक अमली औरत थी, इसलिए वह अपने शौहर से ज़्यादा उनसे लाभ उठाती और इस बात ने उसके चरित्र को बहुत ज़्यादा निखार दिया था।

एक दिन की बात है कि मसीता साईं इशा के बाद तकिया करामत शाह से अपने गाँव जा रहा था। वह कोई वज़ीफ़ा (क़ुरआन की आयत, मंत्र आदि) पढ़ता हुआ जल्दी-जल्दी अपने क़दम बढ़ा रहा था। अचानक उसके कानों में किसी के कराहने की आवाज़ आई। वह रुक गया और कान लगाकर यह मालूम करने की कोशिश करने लगा कि कराहने की आवाज़ किधर से और कहाँ से आ रही है। चाँदनी फैली हुई थी। उसे मालूम करने में ज़्यादा देर नहीं लगी। वह दाहिनी ओर बढ़ा। उसने एक गड्ढे में झुककर देखा। कराहने की आवाज़ उसी गड्ढे से आ रही थी। उसने देखा-कि एक कड़ियल जवान गड्ढे के अन्दर ज़ख़्मी हालत में पड़ा है और उसके नीचे एक मुर्दा घोड़ा भी। मसीता साईं को समझने में देर न लगी। वह समझ गया कि तीर और तरकशवाला यह जवान ज़रूर कोई शिकारी

है, जो अचानक इस गड्ढे में आ गिरा । उसका घोड़ा इस अचानक हादसे से मर गया, मगर वह ख़ुद अभी ज़िन्दा है । मसीता साईं उस ज़ख़्मी जवान शिकारी की जान बचाने के उपाय सोचने लगा । आस-पास रास्ता और मैदान सुनसान था । मदद मिलने की कहीं से कोई उम्मीद न थी । वह अकेले खड्ड में उतर गया । उसने पूरी ताक़त लगाकर 'इल्लल्लाहु' का नारा लगाया और जवान शिकारी को पीठ पर लादकर ऊपर ले आया । जवान शिकारी बेहोश था । मसीता साईं को पहली बार यह तजुर्बा हुआ कि बेहोश आदमी का बदन होशवाले आदमी के बदन के मुक़ाबले में कई गुना भारी होता है । उसने उसे खड्ढे के किनारे घास पर लिटा दिया और फिर सोचने लगा कि उसे घर तक कैसे ले जाया जाए । उसने एक नज़र फिर रास्ते और सुनसान मैदान पर डाली । अब भी अल्लाह के सिवा कोई मददगार दिखाई न पड़ा । उसने हिम्मत से काम लिया । ज़ख़्मी जवान को फिर पीठ पर लादा और गाँव की तरफ़ चल पड़ा ।

वहाँ फ़ातिमा शौहर का इन्तिज़ार कर रही थी । मसीता को आने में देर हुई तो वह फ़िक्रमंद होने लगी । वह बार-बार अपने कच्चे घर के दरवाज़े पर आकर देखती, झाँककर दूर तक रास्ते पर नज़र डालती और फिर जब उसका मुन्ना सोते-सोते मिनमिनाता तो वापस कोठरी में चली जाती । एक बार जब वह दरवाज़े पर आई तो देखा कि शौहर किसी को कंधे पर लादे हुए चला आ रहा है । लाश के बोझ से वह दबा जा रहा है । बार-बार सम्भालता है, लेकिन चूँकि ख़ुद जवान हैं और हिम्मत भी जवान और ज़बान पर 'ला इला-ह इल्लल्लाह' का वज़ीफ़ा है, वह इसी बलबूते पर आ भी रहा था । फ़ातिमा इस हाल में देखकर लपकी, "तुम यह किसे लादे हुए हो ?" उसने पूछा और जवाब का इन्तिज़ार किए बग़ैर बोली, "अच्छा ! इसी जगह ठहरो, मैं चारपाई ले आऊँ ।"

मसीता साईं बेहद थक चुका था । अब तक वह अपने बलबूते और हौसले के सहारे लाश को लादे हुए आ रहा था । 'ला इला-ह इल्लल्लाह' के सहारे अपनी हिम्मत को हौसला और तसल्ली दे रहा था । बीवी का सहारा मिला तो उसे महसूस हुआ कि जैसे उसकी ताक़त ने जवाब दे दिया । उसने ज़ख़्मी जवान को ज़मीन पर लिटा दिया और खड़ा होकर लम्बी-लम्बी साँसें लेने लगा । अब उसे ख़याल आया कि अपनी लाठी वह गड्ढे के पास ही भूल आया है । "ऊँह" कल मिल जाएगी, उसने कहा ।

इतनी देर में फ़ातिमा चारपाई ले आई । उसने शौहर को पसीने-पसीने देखा तो अपनी ओढ़नी से उसके माथे का पसीना पोछते हुए कहने लगी, "कौन है

यह ?"

"देखती नहीं, अल्लाह का एक बन्दा है और बेचारा मौत के मुँह में..... ।"

"हाय, हाय बेचारा !" फ़ातिमा ने फिर कुछ न पूछा । दोनों ने मिल कर ज़ख़्मी जवान को चारपाई पर डाला और घर के अन्दर उठा लाए । चारपाई पर शायद ज़ख़्मी को कुछ आराम मिला तो उसने हरकत की और फिर उसकी ज़बान से निकला "पानी.....पा.....नी....." मसीता पानी लेने चला तो फ़ातिमा ने टोका, "ठहरो, चुल्लू से देना, एकदम प्याला मुँह से न लगा देना । एक-दो चुल्लू से ज़्यादा न पिलाना, नहीं तो मर जाएगा ।" और यह कहकर वह दूध गरम करने लगी ।

मसीता ने एक चुल्लू पानी ज़ख़्मी के मुँह में टपकाया । ज़ख़्मी अनचाहे रूप से पी गया । उसके होंठ नम हो गए । ज़बान भीगी तो फिर उसने कहा, "पानी" मसीता ने एक चुल्लू पानी और पिलाया । उधर फ़ातिमा ने पुकारा, "बस, बस ! अब मैं दूध लाती हूँ ।"

मसीता समझा था कि ज़ख़्मी होश में आ रहा है । पूछने लगा, "भाई ! कौन हो तुम ? ख़ुदा करे तुम जल्द अच्छे हो जाओ । तुम्हारा घोड़ा मर चुका है । इसी लिए मैं तुमको घर ले आया । मैं अभी तुम्हारी मरहम पट्टी करता हूँ । तुम परसों अपने घर चले जाना ।"

ज़ख़्मी जवान ने जवाब न दिया। फ़ातिमा गरम दूध ले आई थी । उसने चमचे से गरम दूध पिलाया । कभी दूध ज़ख़्मी के हलक़ में उतर जाता और कभी मुँह से गिर जाता । वह ज़्यादा न पी सका, शायद वह थोड़ा होश में आने के बाद फिर बेहोश हो गया था ।

घर में न जाने कब का पुराना मरहम रखा था। फ़ातिमा वही ले आई । ज़ख़्मों को साफ़ करके वही मरहम पट्टी लगा दिया गया और ज़ख़्मी को आराम करने के लिए उसके हाल पर छोड़ दिया गया ।

"हाय बेचारा न जाने कैसे खड्ढे में गिर गया ?" फ़ातिमा ने मसीता की तरफ़ देखते हुए कहा—

"न जाने की क्या बात है, शिकारी लोग बेतहाशा शिकार के पीछे दौड़ते हैं । कुछ देखते तो हैं नहीं । बस, इसी लिए यह घटना घटी । घोड़ा उसमें गिरा । उसकी हड्डियाँ और पसलियाँ चूर-चूर हो गईं और शिकारी चोट खाकर बेहोश हो गया ।"

"देखो तो बेचारे का कितना ख़ून निकल गया । सारे कपड़े ख़ून से लथपथ

हैं ।"

और यह कहते-कहते फ़ातिमा ने उसे चादर ओढ़ा दी और फिर न जाने वह क्यों चौंक-सी पड़ी । घर के चिराग़ की मंद रौशनी ज़ख़्मी के चेहरे पर पड़ रही थी । फ़ातिमा बड़े ग़ौर से उसका चेहरा तकने लगी । फिर वह मुड़कर शौहर के पास आई, जिसे उसने खाना दे दिया था । मसीता खाना खा रहा था । उसने बीवी की तरफ़ देखा ।

"अरे, तेरा चेहरा फ़क़ क्यों हो रहा है !" उसने बीवी को डरा हुआ महसूस किया ।

"तुम न जानो, न पहचानो ! मैं कहती हूँ, तुम यह किसे घर ले आए ?" फ़ातिमा ने चुपके से कहा । उसके इस तरह कहने से मसीता घबरा-सा गया । उसने प्याला उठाया, पानी पिया । फिर पूछने लगा—"क्या तुम उसे पहचानती हो ?"

"पहचानती तो नहीं, उसके यह तीर, उसकी यह कमान, उसका यह तरकश ! इनसे पहचानो । यह कौन है ?"

"मैं तो यही समझा था कि अल्लाह का एक बन्दा है । ज़ख़्मी है, मदद का मुहताज है । उसकी मदद करनी चाहिए ।"

"मुझे तो ऐसा लगता है कि यह मुल्ताना डाकू है, तुमने सुना नहीं ! उसकी गिरफ़्तारी के लिए हज़ारों का इनाम है और यह भी कि अगर कोई उसे अपने घर छुपाएगा तो वह भी उसी के गिरोह का समझा जाएगा ।"

बीवी से यह सुना तो मसीता साईं की सारी हमदर्दी ग़ायब हो गई । उसने कहा, "तो अभी हुआ ही क्या है । आओ चलें ! इसे तालाब के किनारे डाल आएँ ।"

"न, अब नहीं, अब तो तुम उसे पनाह दे चुके । तुम को वह क़िस्सा याद नहीं, जो इस जुमा को छोड़ उस ज़ुमा को सुनाया था ।"

"क्या ?"

"वही कि हमारे बुज़ुर्गों में से किसी ने अपने बेटे के क़ातिल को पनाह दी थी । जानते न थे कि यही उनके बेटे का क़ातिल है । फिर मालूम हुआ तो सुबह होने से पहले उसे घोड़ा दिया, रास्ते का खाना-ख़र्च दिया और कहा, "जल्दी यहाँ से भाग जाओ, ऐसा न हो कि बेटे के ग़म में मैं तुमको क़त्ल कर दूँ ।"

"हाँ, यह वाक़िया तो सच्चा है ।"

"तो फिर हम भी उसे पनाह देंगे ।"

"और कल ही चौकीदार राजा साहब को ख़बर करेगा और फिर तुम जानती ही हो क्या होगा ।"

"तुम कह देना कि मैं क्या जानूँ, कौन है ? तुम तो बस कह देना कि अल्लाह का बन्दा है ।"

"और सुन तो मुन्ने की माँ ।"

"क्या कहते हो, चुपके-चुपके बातें करो, कोई सुन न ले ।"

"मुन्ना सो रहा है, ना !"

"ऊई ! यह क्या बात हुई, तुम कुछ और कहना चाहते थे ।"

"मैं यह कहना चाहता था कि हम ग़रीब हैं ।"

"वह तो हैं ही, अल्लाह का शुक्र है ।"

"तो क्यों न यह करें कि....कि.....कि..... !"

"क्या, कहो ?"

"कल राजा से कह कर उसे पकड़वा क्यों न दूँ । हज़ारों का इनाम ले लूँ ।"

"हाय अल्लाह ! तौबा करो मुन्ने के अब्बा, तुमने हातिमताई का क़िस्सा सुनाया था । किसी दुश्मन ने हातिमताई के क़बीले पर हमला कर दिया, मगर हातिम इस लिए नहीं लड़ा कि बेकार में ख़ून-ख़राबा होगा । वह जंगल की ओर चला गया । दुशमन ने दस हज़ार अशर्फ़ियों के इनाम का एलान किया जो हातिम को गिरफ़्तार कर लाए उसको मिलेगा । यही बातें एक लकड़हारा जंगल में अपनी बीवी से कर रहा था कि अगर हातिम मिल जाए तो पकड़ कर ले जाऊँ, हातिम सुनकर आ गया, और कहा, "चल भाई ! मुझे गिरफ़्तार करके ले चल और इनाम ले । याद है ना यह क़िस्सा !"

"याद तो है, तेरी क्या राय है ।"

"मैं तो समझती हूँ, तुम हमदर्दी के तौर पर भूल से उसे ले आए, अब उसकी ख़िदमत करो । मैं कल-परसों तक किसी को घर में आने ही न दूँगी । परसों तक यह ख़ुद अच्छा हो जाएगा, फिर उसे कुछ कहे बग़ैर रुख़्सत कर देंगे और अपने अल्लाह से माफ़ी माँगेंगे ।"

"तू बड़ी ईमानदार बीवी है, तो तुझे रुपये नहीं चाहिए ।"

"न, मुझे केवल अल्लाह की ख़ुशी चाहिए । बस !"

"मैं तो तेरे लिए ही कह रहा था, मुझे लालच नहीं ।"

फ़ातिमा ने मुस्कुरा कर शौहर को देखा । मसीता खाना खा चुका था । फ़ातिमा ने इस पर बात मारी, "तुम मर्द बड़े घुमा-फिरा कर बातें करते हो । दिल में कुछ ज़बान पर कुछ । हम औरतें ऐसी नहीं होतीं, हमारे जो दिल में वह ज़बान पर ।"

"तो तू अपने को राबेआ-बसरी (सच्ची) समझती है ।" और यह कह कर मसीता अपनी चारपाई की तरफ़ बढ़ा, जाकर लेट गया और लेटते ही सो गया । फ़ातिमा ने बरतन उठाए । उसने एक नज़र ज़ख़्मी जवान पर फिर डाली, फिर आसमान की तरफ़ देखा । "अल्लाह तू ही मालिक और मौला है" उसकी ज़बान से निकला और वह अपनी खटिया पर जाकर लेट गई । मुन्ने को सीने से लगा लिया और सो गई ।

सुबह-सवेरे मसीता सोकर उठा तो वह हक्का-बक्का होकर रह गया । उसने घर में इधर-उधर देखा और फिर बीवी को जगाया ।

"क्या है, क्या ?" बीवी ने करवट लेने के साथ ही कहा ।

"मुल्ताना भाग गया ।"

फ़ातिमा हड़बड़ा कर उठ बैठी और हैरत के साथ इधर-उधर देखने लगी।

"और मेरी चादर भी ले गया ।"

"देखती क्या है, वह कोई सूई था, जो नज़र न आता," मसीता ने कहा, "चलो अच्छा ही हुआ, वह ख़ुद चला गया । अब हम से क्या मतलब ।"

और यह कहकर उसने इसी में ख़ैरियत समझी कि जल्द-से-जल्द अपने तकिए की तरफ़ चल दे । उसने बीवी को ताकीद कर दी कि अगर कोई कुछ पूछे तो कुछ न बताए ।

मसीता साईं अपने तकिए पर चला गया, लेकिन वह परेशान सा रहा । दोपहर के क़रीब उसने देखा कि चार तलंगे उसी तरफ़ आ रहे हैं । अब तो वह घबराया, समझ गया कि राजा को ख़बर हो गई । न जाने फ़ातिमा पर क्या गुज़री । वह लपक कर मज़ार के आसपास झाड़ू देने लगा और कोई वज़ीफ़ा पढ़ने लगा ।

सिपाही मज़ार पर आए और पूछने लगे, "मसीता साईं तुम हो ?"

मसीता साईं की ज़बान लड़खड़ा गई । कहने को तो उसकी ज़बान से "न" निकला, लेकिन दिल में हलचल होने लगी कि फ़ातिमा को पकड़ा हो तो.....?

"तो वह कहाँ है ?" एक सिपाही ने पूछा ।

"यहीं कहीं होगा, क्या बात है ?" उसने सिपाहियों से पूछा । वह हकला भी गया । साथ ही, उसे महसूस हुआ कि जैसे प्यास के मारे हलक़ में ख़ुश्की आ जाती है, बिलकुल वही हाल उसका है । सिपाहियों ने बताया कि बात-वात हम नहीं जानते । हमको हुक्म मिला कि मसीता साईं को हाज़िर करो ।"

"तुमने उसे उसके घर क्यों नहीं देखा ?" मसीता साईं ने पूछा ।

जवाब में सिपाहियों ने बताया कि राजा साहब ने उसकी बीवी को बुलाया है, अब मसीता के लिए भी हुक्म हुआ है ।

यह सुनते ही मसीता की आँखों में आँसू भर आए । पास आकर बोला "मैं ही मसीता साईं हूँ, मुझे गिरफ़्तार कर लो ।"

"हमें गिरफ़्तार करने का हुक्म नहीं दिया गया है । हुक्म है कि मसीता को हाज़िर करो, इसलिए तुम हमारे साथ चलो ।"

मसीता ने अपना सामान सँभाला, लाठी ली और सिपाहियों के आगे-आगे चलने लगा । रास्ते में न मालूम बेचारे के दिमाग़ में कैसे-कैसे अंदेशे आ रहे थे । वह "या अल्लाह, या रहमान" का वज़ीफ़ा पढ़ता जा रहा था । सिपाहियों ने गढ़ी के अन्दर पहुँचकर उसे अन्दर कर दिया और फिर दो विशिष्ट सिपाहियों ने ले जाकर उसे राजा के सामने पेश कर दिया । मसीता ने झुक कर राजा को सलाम किया और साथ ही उसकी ज़बान से निकला, "सरकार ! मैं बेगुनाह हूँ, मुझे मालूम न था ।"

"हूँ.....ऊँ.....ऊँ....." राजा ने कहा, "रात को तुमने मुल्ताना को अपने घर में पनाह दी और अब कहते हो कि तुम निर्दोष हो । क्या तुमने हमारा एलान नहीं सुना ।"

राजा ने डाँटकर यह कहा तो मसीता को ऐसा लगा कि उसके पाँवों क़ी ताक़त जाती रही ।

उसने गिड़गिड़ाते हुए कहा, "सरकार ! मैं मुल्ताना को नहीं जानता....."

"अच्छा तो तुम उसकी सज़ा भुगतो ।"

"और सरकार मेरी बीवी ?"

"तुम दोनों को सज़ा दी जाएगी । तुम्हारी बीवी हवालात भेज दी गई है ।"

मसीता फूट-फूट कर रोने लगा । राजा ने उसके रोने की परवाह नहीं की । वह मुड़ा और महल के अन्दर चला गया । चलते वक़्त दोनों सिपाहियों को आदेश

दिया कि इस अपराधी को पहले रानी की सेवा में भेजो । वह भी इस निडर अपराधी को देखना चाहती है, जिसने मुल्ताना को अपने घर में पनाह दी ।

मसीता को बिलकुल यक़ीन हो गया कि अब मौत क़रीब है । वह दिल-ही-दिल में अपने को कोसने लगा, "सच ही कहा है समझदार लोगों ने कि बीवी के कहने में कभी नहीं आना चाहिए । काश ! मैं मुल्ताना को अपने घर न लाता । लाया था तो फिर तालाब के किनारे डाल आता, या राजा को ख़बर कर देता । इनाम-का-इनाम पाता और जान भी बचती....."

दोनों सिपाही उसके आस-पास चल रहे थे और दोनों के मज़बूत हाथों में उसकी दोनों बाहें थीं ।

"मैं भागूँगा नहीं । मैं चोर नहीं हूँ, मेरी बीवी और मेरा बच्चा हवालात में हैं । मैं भागकर क्या करूँगा, मसीता ने सिपाहियों से कहा । साथ ही उसे ख़याल आया कि उसे हथकड़ी और बेड़ी क्यों नहीं पहनाई गई । वह महल के दरवाज़े तक ले जाया गया । दरवाज़े पर ही सिपाही रुक गए और उसे अन्दर कर दिया । अब वह महल के सिपाहियों के बीच था । वह धीरे-धीरे काँपता और लरज़ता एक बड़े कमरे की तरफ़ जा रहा था । कमरे के दरवाज़ों पर हरे-हरे परदे पड़े थे, और उन पर राम और सीता की तस्वीरें बनी हुई थीं । सिपाहियों ने एक दरवाज़े का परदा उठाया और उसे अन्दर जाने का इशारा किया ।

अन्दर पहुँचते ही उसके दिलो दिमाग़ को बहुत बड़ा धक्का लगा । उसने देखा कि रानी साहिबा एक छोटे-से सुसज्जित सिंहासन पर विराजमान हैं । दासियाँ, बाँदियाँ हाथ बाँधे खड़ी हैं । फ़ातिमा बच्चे को लिए एक चारपाई के पास उदास बैठी है । उसकी आँखों में आँसू हैं । उसने भी एक नज़र मसीता को देखा । लेकिन उसे इजाज़त न थी कि अपनी जगह से हिल सके या ज़बान से बोल सके । मसीता ने देखा चारपाई पर कोई फ़ातिमा की चादर ओढ़े लेटा है । मसीता समझ गया कि चादर समेत मुल्ताना को गिरफ़्तार कर लिया गया । इससे बढ़कर और सबूत क्या होगा । वह मौत के लिए तैयार हो गया । उसने बीवी की तरफ़ देखकर उँगली ऊपर उठाई, गोया उसने कहा कि अब ख़ुदा के सिवा कोई बचा नहीं सकता । वह मौत के लिए तैयार हो गया तो उसका दिल भी ठहरा, अब उसने झुक कर रानी साहिबा को सलाम किया और हाथ जोड़ कर कहने लगा, "सरकार ! मैं मुल्ताना को पहचानता न था ।"

"अच्छा तो अब पहचानो !" और यह कह कर रानी साहिबा ने फ़ातिमा को आदेश दिया कि अपनी चादर उतार ले ।

"मौला जो तेरी मर्ज़ी !" कह कर फ़ातिमा ने चादर उतारी और साथ ही उसकी ज़बान से निकला, "सरकार !" वह मसीता की ओर देखने लगी । मसीता की समझ में कुछ नहीं आ रहा था, उसने ऐसा ड्रामा कभी न देखा था । उसने देखा कि राजा साहब मुस्कुराते हुए चारपाई पर उठकर बैठ गए । उनके पास वही तरकश रखा हुआ था और उन्हीं कपड़ों में थे, जो ज़ख़्मी जवान के पास रात को फ़ातिमा और मसीता ने देखे थे । फ़ातिमा और मसीता दोनों सलाम के लिए झुक गए ।

उधर रानी ने एक दासी से कहा, "इनके बच्चे को उठा लाओ और मेरी गोद में दे दो ।"

अच्छा किरदार

"उई, दूल्हा भाई काले.....!".....नन्हीं सईदा क्या जाने कि क्या बात कहनी चाहिए क्या नहीं, वह बाहर से आई और उसने गोला-सा दाग़ दिया । माँ ने बढ़कर उसे चुप तो कर दिया, लेकिन आवाज़ औरतों के कानों में पड़ चुकी थी। सबकी नज़रें परवीन की तरफ़ उठ गईं—परवीन ? वह जो अभी-अभी परवीन सिराज बन चुकी थी, परवीन वह जो अपने गोरे-चिट्टे रूप-रंग में हर वक़्त दूध से नहाई मालूम होती थी; परवीन, वह जो अपनी सुन्दरता में सितारों को शरमाती थी । औरतों को यक़ीन नहीं आया कि इसका दूल्हा काला हो सकता है । काना-फूसियाँ होने लगीं कि सईदा को धोखा हुआ । कुछ औरतें चुपके-चुपके यह भी कह रही थीं कि चट मंगनी पट ब्याह में ऐसा ही होता है और कुछ का हमदर्दाना लहजा यूँ भी था— "फिर आख़िर परवीन के लिए क्या दूल्हा आसमान से आए ।" आजकल अच्छे वर मिलते ही कब हैं । शक्लो सूरत के हैं, तो बेरोज़गार । बड़े घराने के हैं तो बेकिरदार, आवारा, बदमाश । पढ़े-लिखे हैं तो टके के नौकर, बेघर, बेदर और अगर नेक सीरत हैं तो ख़ूबसूरत नहीं । आख़िर माँ बेचारी क्या करती, जवान-जहान को बिठाकर बुढ़िया कर देती । यूँ भी तो पच्चीस से ऊपर की हो गई बेचारी ।

ये तो थीं मेहमान औरतों की चेमीगोइयाँ । उस बेचारी परवीन ने भी बहन की मासूम आवाज़ सुन ली थी । अचानक वह चौंकी, उसने सईदा की तरफ़ देखा, लेकिन जब उसने देखा कि सभी औरतों की नज़रों की तीर उसी के तरफ़ हैं तो वह उन तीरों का सामना न कर सकी । उसने सिर झुका लिया और घबड़ाहट का शिकार हो गई । उसे याद आया कि एक बार एक ऐसी ही शादी में वह गई हुई थी जहाँ उसकी सहेली सुरैया ने छत से बरातियों की तरफ़ उँगली उठाई थी और बताया था, मेरे लिए इसका पयाम आया था । भला मैं इस काले-कलूटे से अपना पल्लू क्यों बाँधने लगी । मैंने अम्मीजान से साफ़ कह दिया कि चौदहवीं का चाँद इस काले नमक के पहाड़ पर नहीं चमकेगा ।

परवीन ने पूछा था कि उसका नाम क्या है तो सुरैया ने सिराज अहमद ही बताया था । बेचारी सोचने लगी—क्या वही सिराज उसका सरताज बन गया । अगर वही हुआ तो.....? उसकी ज़बान से निकल गया । उसके आस-पास उसकी हमजोलियाँ बैठी चुहलें कर रही थीं । सईदा की आवाज़ से उनकी चुहलों पर ओस पड़ गई । एक सँजीदा लड़की ने, शायद उसका विवाह हो चुका था, हाँ, उसी

सँजीदा ने कहा भी, "ऊँह, सुन्दरता लेकर क्या बाज़ार में बेचना है । सूरत को कोई दो दिन चाट ले । आदमी का चरित्र अच्छा होना चाहिए ।" लेकिन उसकी सँजीदा बातें परवीन के कानों में गर्म सीसा बन कर लगीं । उसने दिल-ही-दिल में कहा कि अच्छा हुआ आज सुरैया इस उत्सव में न आ सकी । वह होती तो सिराज को दरवाज़े की झुर्रियों से, किवाड़ों की दराज़ों से, छत की मुण्डेरों से, ग़रज़ किसी-न-किसी तरह ज़रूर देखती और फिर वह क्या कहती । मगर उसके न होने से क्या असलियत उससे छिप जाएगी । आज नहीं तो कल वह भी जान जाएगी और जब जान लेगी तो बात मारेगी, "अरी अंधी ! क्या तूने देखा नहीं था और फिर भी उसे क़बूल कर लिया, रेशम में कम्बल का पैबन्द लगा लिया । मगर उस बेचारी को क्या मालूम कि हफ़्ता भर के अन्दर ही यह सब तय हो गया । किसने किसको देखा बस अम्माँ-अब्बा में कुछ खुस-फुस हुई और बातों-बातों में एक दिन मुझे मालूम हो गया कि वह ओरिएन्टल कॉलेज में टीचर है । साढ़े तीन हज़ार तनख़्वाह है । तन्दुरुस्त, मोटा-ताज़ा और शरीफ़ आदमी है । मैं भी मुतमइन हो गई कि चलो अब्बाजान मेरे दुशमन तो हैं नहीं, उफ़ अल्लाह ! उसकी ज़बान से निकल गया । लड़कियाँ उसकी तरफ़ देखने लगीं । कुछ लड़कियाँ तो उससे उसके दिल का हाल पूछने लगीं । मगर उसने टाल दिया और फिर सोचने लगी, "काश ! सईदा इस भरी सभा में न कहती । मगर इससे क्या होता है, थोड़ी देर में दूल्हा बुलाया ही जाएगा और कुछ रस्में अदा करने के बाद वह मुझे डोली में बिठा कर चलता बनेगा । तब तो सब देखेंगे ही ।"

हुआ भी यही, वैसे चाहे मेहमान औरतें कुछ देर बाद तक़ाज़ा करतीं, लेकिन जब सईदा से दूल्हा की प्रशंसा सुनी तो उन्हें दूल्हा को देखने के लिए बेचैनी होने लगी । उन्होंने बुलाने का तक़ाज़ा शुरू कर दिया, लगभग सभी औरतें दिलचस्पी लेने लगीं । उधर दूल्हे को अन्दर बुलाने का कार्यक्रम शुरू हुआ, इधर परवीन को घबराहट होने लगी । उसका बस चलता तो वह मना कर देती कि मत बुलाएँ । लेकिन वह कैसे कह सकती थी । हाँ, वह यह ज़रूर कर सकती थी और उसने किया भी कि उसकी बड़ी-बड़ी नर्गिसी आँखों से आँसू बहने लगे और फिर देखते-देखते उस पर दौरा पड़ गया । उसके हाथ-पैर ऐंठने लगे । मुँह से कफ़ जारी हो गया और वह बेहाल हो गई । घर की बड़ी-बुढ़ियाँ दौड़ पड़ीं । लड़कियों को वहाँ से हटा दिया गया और तजुर्बाकार औरतें नई-नवेली दुलहन को सम्भालने में लग गईं । आधा घन्टे के बाद वे कामयाब हुईं । परवीन को होश आया तो उसने माँ के क़दमों पर सिर रख दिया । माँ ऐसी नहीं कि कुछ समझती न हो, वह सब जानती थी । उसने जवाब में अपना सिर बेटी के पैरों पर रख दिया । इसके बाद अब यह कहना बेकार है कि परवीन किस दिल के साथ बिदा होकर सिराज के

साथ गई ।

परवीन का शौहर एक पढ़ा-लिखा नौजवान था । शिक्षा प्राप्त करने के बाद उसने पढ़ाने का काम शुरू किया । अपनी रुचि के मुताबिक़ ही उसने यह काम अपनाया था । उसे पढ़ने-पढ़ाने से बड़ा लगाव था । इस काम से उसे क़ुदरतन दिलचस्पी थी । बहुत-से ग़रीब लड़के निःशुल्क उसके घर पर पढ़ने आते थे और वह प्रतिदिन पाबन्दी से उन पर एक घण्टा समय लगाता था । किताबी ज्ञान के साथ किसी-न-किसी मसले को बहाना बनाकर वह बच्चों की ज़ेहनी तरबियत ज़रूर करता । वह मुहल्ले में सबको प्रिय था । छोटे-बड़े सब उसके चरित्र और उसकी शराफ़त और सज्जनता की प्रशंसा करते थे । अपने किरदार और अपनी बातचीत में वह एक शरीफ़ और सज्जन इनसान नज़र आता था । लेकिन वह इसको क्या करता कि क़ुदरत ने उसे रंग का काला बनाया था । उसे अपने काले रंग पर अपने पैदा करनेवाले से शिकायत भी न थी । एक बार जब उसके बेतकल्लुफ़ दोस्तों ने उसकी प्रशंसा करते हुए उसके रंग पर टिप्पणी की तो हँस कर बोला, "भाई आख़िर कोई न कोई ऐब होना ही चाहिए । बेऐब ख़ुदा की ज़ात है । वैसे मैं तो इस रंग को ऐब नहीं समझता ।"

सिराज बहुत ख़ुश था, जब उसने सुना कि माँ-बाप ने उसकी शादी एक पढ़ी-लिखी लड़की से ठहराई है । उसने यह भी सुना कि लड़की क्या है, चाँद का टुकड़ा है, लेकिन उसने इस पर ध्यान नहीं दिया । हाँ, शिक्षा के बारे में दो-चार प्रश्न बहन से किए और चुपचाप अपनी राय दे दी । और फिर एक दिन बड़े अरमानों के साथ अपनी नई-नवेली दुल्हन को लेकर अपने घर आ गया । वह अपनी बीवी को देखने के लिए बड़ा बेचैन हो रहा था और न जाने क्या-क्या मंसूबे बनाए था । उसने न जाने क्या-क्या सोचा था । उसने पहली मुलाक़ात की सबसे पहली बात चीत का विषय भी सोच लिया था । लेकिन उसके अरमानों पर ओस पड़ गई, जब वह अपनी दुल्हन के सजे-सजाए कमरे में दाख़िल हुआ और उसने नई नवेली-दुल्हन को हारों, गजरों और लाल ओढ़नी के बग़ैर मसहरी के पास पड़ी हुई आराम कुर्सी पर बैठे देखा, वह कमरे में क़दम रखते ही ठिठक कर खड़ा हो गया ।

"आप की तबीयत कैसी है ?" वह सामने पड़ी हुई कुर्सी पर बैठ कर जवाब का इन्तिज़ार करने लगा । उसने कमरे में देखा एक तरफ़ हार और गजरे इस तरह पड़े हुए थे जैसे किसी ने ग़ुस्से में नोच कर उन्हें फेंक दिया हो ।

"सुना था आप पर दौरा पड़ा था । क्या अभी कुछ असर बाक़ी है ?" उसने फिर सवाल किया और फिर अनायास वह दुआ करने लगा— "अल्लाह तआला

आप को मेरे घर में हमेशा ख़ुश रखे और मुझ में यह शक्ति दे कि मैं आप को प्रसन्न रख सकूँ और आप के वे सारे हुकूक़ अदा कर सकूँ, जो शरीयत के मुताबिक़ मुझ पर लागू होते हैं ।"

परवीन अब भी चुप थी । वह उसे देखे जा रही थी और वह इस तरह साँस ले रही थी कि उसका सीना बार-बार उभर आता था । सिराज ने इस कैफ़ियत को महसूस किया । उसने फिर कहा, "अगर ज़रूरत हो तो डाक्टर को बुलाऊँ ।"

"क्यों—" आख़िर वह फट पड़ी "डाक्टर क्या मेरे दर्द का इलाज कर देगा, डॉक्टर क्या आप के काले रंग को गोरा कर देगा । आप मुझे किस तरह ख़ुश रख सकते हैं, जबकि आप देख रहे हैं कि रंग-रूप में मेरा आप का कोई जोड़ नहीं ।" वह लम्बी-लम्बी साँसे लेने लगी ।

"परवीन !"

"देखिए, मैं आप से निवेदन करती हूँ कि आप मेरा नाम मत लीजिए, अगर आप अपनी इज़्ज़त चाहते हैं तो तुरन्त कमरे से निकल जाएँ ।"

"बेहतर है, मैं कमरे से निकल जाऊँगा लेकिन एक बात आप बता दें, जब मुझ कलूटे को आपने पसन्द नहीं किया तो मेरे साथ अल्लाह और रसूल का नाम लेकर निकाह क्यों मंजूर कर लिया ?"

"मुझे बिलकुल नहीं मालूम था कि आप जैसे काले नमक के पहाड़ पर बर्फ़ की तरह मुझे पिघलना पड़ेगा ।"

"माशाल्लाह ! गुफ़्तगू तो आप बड़े तरक़्क़ी पसन्दाना अदब में करती हैं । मेहरबानी करके यह भी बताइए कि निकाह के बाद वहीं यानी अपने माँ-बाप के सामने यह मसला क्यों नहीं छेड़ा ? यदि, आपने वहाँ यह मसला छेड़ा होता तो यह मनहूस सूरत इस वक़्त आपके सामने क्यों होती ?"

"माँ-बाप की इज़्ज़त का ख़याल था । घर में सैकड़ों औरतें थीं, मैं मजबूर हो गई ।"

"तो मैं भी एक गुज़ारिश करूँ । मेरे घर भी मेहमान मौजूद हैं । मैं आप का मंशा समझ गया । आप अपने दिल में घबराहट महसूस न करें । मैं अभी जाता हूँ, लेकिन आप से गुज़ारिश करता हूँ कि आप कम-से-कम कल तक सब्र करें । कल मेहमान रुख़्सत हो जाएँगे । दिन गुज़रने के बाद आप अपने माँ-बाप के घर होंगी । मैं आप से वादा करता हूँ कि आप पर किसी तरह की ज़बरदस्ती न होगी और इस दुखद घटना की चर्चा किसी से भी नहीं की जाएगी । अच्छा, फ़ी अमानिल्लाह-अस्सलामु अलैकुम !"

सिराज कुर्सी से उठकर बाहर निकल गया । परवीन उसे देखती रही । उसके जाते ही उसने किवाड़ बन्द करके चटख़नी लगा दी । उसका ख़याल था कि सिराज के जाने के बाद उसकी बहनें और भाभियाँ कमरे में घुस आएँगी, मगर किवाड़ों पर हलकी-सी दस्तक भी न हुई । "शायद सिराज ने मना कर दिया हो," एक ख़याल उसके दिमाग़ में गूँजा और वह मसहरी पर जा लेटी और घण्टों न जाने क्या सोचती-सोचती नींद की गोद में पहुँच गई ।

वास्तव में, दूसरे दिन सिराज उस कमरे की तरफ़ होकर नहीं निकला । उसके घरवालों ने इसकी वजह उसकी हया और शर्म को समझा । लेकिन उसके घरवालों की हैरत की सीमा न रही जब इशा के वक़्त उसने माँ से कहा कि परवीन को उसके माँ-बाप के घर भिजवा दीजिए, उसकी तबीयत अच्छी नहीं है । घरवालों को हैरत तो हुई, लेकिन वे अपने बेटे के बारे में बहुत ख़ुशगुमान थे । उसकी इच्छा पर परवीन को रुख़्सत कर दिया । परवीन घर पहुँची तो वहाँ भी सब मुँह में उँगली दबाकर रह गए, माँ ने बेटी के तेवर पहचान लिए थे । मगर वह उस वक़्त कुछ न बोली । थी भी तो अजीब बात । रात को नौ बजे और सिराज के बिना परवीन पहली बार ही अकेली आई । सिराज समझदार था कि उसने रात को भेजा । वरना दिन में दुनिया का मुँह कौन रोकता ।

लेकिन क्या फिर दिन नहीं आया और फिर क्या दुनिया की ज़बान को किसी ने रोक लिया ? दूसरे दिन मुहल्लेवालों को मालूम हो गया । परवीन की सहेलियाँ दौड़ पड़ीं । कोई शौहर की निशानी देखने के शौक़ में, कोई परवीन पर आवाज़ें कसने, कोई ससुराल में मिले गहने देखने । मगर ये सब की सब आँगन में ही रोकी गईं । माँ ने कह दिया कि परवीन की तबीअत ठीक नहीं है । डॉक्टर ने भीड़ से मना किया है । मगर बुआ को कौन रोकता । वह दनदनाती हुई अपनी भन्नो के पास पहुँच गई और उसे एक नज़र देखते ही बोली, "उई ! यह तो जैसी गई थी वैसी ही वापस आई ।" वास्तव में, यह बहुत बड़ी चोट थी, जो बुआ ने की थी । परवीन सुनकर ग़ुस्से से बेताब हो गई । उसने बुआ को डपट दिया, "ऐसे ही आ गई, तुम से क्या ?"

"ऊई, मुझ से क्या । अरी नाज़ो मैंने तुझे गोदों खिलाया है, मेरा हक़ है । मुझे यूँ जवाब न दे । मियाँ चाँद-तारा होता तो शायद माँ-बाप से तू इसी तरह बात करती ।"

बुआ ने दूसरा भरपूर व्यंग्य किया । इस व्यंग्य से वह तिलमिला उठी । यही तो वह बात थी, जिसने परवीन की दुनिया तबाह करके रख दी थी । वह बेतहाशा रो पड़ी, माँ ने बुआ को बुला लिया । फिर मियाँ से कुछ तन्हाई में बातें कीं ।

दोनों फिक्रमंद हो गए ।

शाम को खाना खाने के वाद बाप ने बेटी को समझाना शुरू किया, "बेटी ! मैं तुम्हारा दुशमन नहीं हूँ । मेरी नज़र में वे सभी नौजवान हैं, जिनसे तुम्हारा रिश्ता किया जा सकता था । क़ाज़ी साहब का लड़का निरा मूर्ख है, तो मुफ़्ती एहसानुल्लाह का लड़का निरा मुल्ला । सेठ जमाल का लड़का ख़ूबसूरत तो है, लेकिन है लिख लोढ़ा, पढ़ पत्थर । अल्ताफ़ुल्लाह साहब का घराना बहुत ही इज़्ज़तदार है, लेकिन उस घराने का हर नौजवान अय्याश और शराबी है । अब क्या मैं उनमें से किसी को अपनी प्यारी बेटी सौंप देता । ले दे के यह ग़रीब टीचर जँचा, तो बेटी बेऐब तो सिर्फ़ ख़ुदा की ही ज़ात है । कालापन किसी के बस की वात नहीं । अल्लाह जिसे जैसा चाहता है, पैदा करता है । फिर कौन जाने कल क्या हो । नसरीन को तुमने देखा, कैसी फूल-सी बच्ची थी । ऐन जवानी में चेचक निकली और उस ग़रीब का चेहरा खण्डहर बन गया । मेरी राय है कि सब्र से काम लो । हो सकता है आगे चलकर तुमको उसकी कोई आदत पसन्द आ जाए और वही काला चेहरा तुमको ख़ूबसूरत नज़र आने लगे । निगार को देखो कैसी ख़ूबसूरत है, लेकिन उसका शौहर उसकी तरफ़ नज़र उठा कर भी नहीं देखता । उसने एक साँवली-सलोनी तवायफ़ को घर में डाल लिया । आख़िर कोई वजह तो है कि ख़ूबसूरत निगार के मुक़ाबले में वह सलोनी उसे भा गई । बेटी ! मैंने दुनिया बहुत देखी है । मुझे तुम्हारा यह काला सिराज हज़ारों चाँद और सितारों से अच्छा लगता है । उसकी पहली शराफ़त यही देखो जो उसने पहली बार तुम्हारी उदासीनता और नाराज़गी पर बरती । वह तुमको इस तरह बदनाम करके तलाक़ दे सकता था कि हम सब मौत की दुआ करने लगते; मुँह दिखाने के क़ाबिल नहीं रहते, मगर उसने किस एहतियात से काम लिया । ज़र्रा बराबर ज़्यादती न की । क़ानूनी और शरई दोनों हैसियतों से वह तुम्हारा शौहर हो चुका है । वह चाहे तो तुमको इस घर से उठा ले । पढ़-लिख कर ऊपरी चमक-दमक पर ही तुम्हारी नज़र टिक गई । इसके अन्दर तुम नहीं देख सकतीं । अफ़सोस ! सैकड़ों बार अफ़सोस !"

वालिद मुहतरम ! अपनी नसीहतें ख़त्म करके ख़ामोश हो गए । परवीन टस से मस न हुई, सुबह हुई तो मुहल्ले में तरह-तरह की बातें होने लगीं । ये बातें किसी न किसी तरह उस घर में भी पहुँचती थीं । परवीन के कानों में भी पड़तीं । उसे बड़ी घबराहट होती । फिर एक दिन माँ ने कहा कि बादशाह तक तो अपने घर बिठा कर बेटी को खिला नहीं पाता, तो परवीन को बड़ा बुरा लगा । इसी हफ़्ते वह गर्ल्स कॉलेज की प्रिंसिपल साहिबा से जाकर मिली और उसके दसवें दिन वह बोर्डिंग हाउस की इंचार्ज की सहायक बनकर वहीं चली गई । माँ-बाप

देखते ही रह गए ।

बोर्डिंग हाउस में वह हर वक़्त अपने को व्यस्त रखने की कोशिश में रहती । कोई काम न होता तो वहाँ रहनेवाली लड़कियों के पुराने जम्परों की मरम्मत का काम ले बैठती । ऐसी ख़िदमतों से वह उस्तानियों और लड़कियों सब में हर दिल अज़ीज़ (सर्वप्रिय) तो हो गई, लेकिन उसके चेहरे पर जो उदासी और नाराज़गी शादी के दिन पैदा हुई थी, उसमें कमी न हुई । वह हँसती तो उसे ऐसा लगता जैसे दिल में बैठा कोई उसके क़हक़हे अन्दर की तरफ़ खींच रहा है । और यह दिल में बैठा हुआ चोर वही उसका वह काँटा था कि हाय क़िस्मत में शौहर काला लिखा था । वह इस काँटे को निकालने में कामयाब न हो सकी । वह चाहती थी कि सिराज का ख़याल उसे न आए । मगर वह उसे जितना ही भूलने की कोशिश कर रही थी, उतना ही वह याद आए जा रहा था । एक दिन वह बहुत परेशान थी । सिराज बुरी तरह उसके ख़यालों पर छाया जा रहा था । वह उससे तलाक़ लेने के उपाय सोच रही थी । उसकी समझ में कुछ न आया तो उसने प्रिंसिपल साहिबा से इजाज़त लेकर सैर करने की ठानी । पाँच-छः लड़कियों को साथ लिया और यमुना की तरफ़ चल दी । बुर्क़ा उसने ओढ़ रखा था, मगर नक़ाब उलटी हुई थी । अस्र के वक़्त तक लड़कियों के साथ वहाँ रही । फिर वापसी का इरादा किया । टैक्सी का रास्ता देखने लगी । सड़क पर इन्तिज़ार कर रही थी कि लड़कियों ने एक टैक्सी आते देखी । दूर से सिर्फ़ ड्राइवर नज़र आ रहा था । लड़कियों ने हाथ उठाए । टैक्सी पास आकर रुक गई । परवीन लड़कियों को लेकर बढ़ी । मगर अन्दर सिराज बैठा नज़र आया । "अरे !" जैसे किसी ने तीर मारा हो । वह सिराज को देखते ही पीछे हट गई और नक़ाब को अपने चेहरे पर खींच लिया और लड़कियों से कहा, "इधर आओ ।" लड़कियाँ हट गईं । वे भी समझ गईं कि टैक्सी ख़ाली नहीं है, लेकिन जब सिराज ने देखा तो वह उन सब की ज़रूरत समझ गया । उस वक़्त वह महमूद साहब के यहाँ उनकी दावत पर जा रहा था । उन्होंने ही उसे लाने के लिए टैक्सी भेजी थी । वह सड़क के दूसरी तरफ़ उतर पड़ा । ड्राइवर से कहा कि इन सब को गर्ल्स कॉलेज पहुँचा दो और ख़ुद दूसरे स्कूटर पर बैठकर महमूद साहब के घर की तरफ़ रवाना हो गया ।

ड्राइवर नें लड़कियों से सिराज की बात दुहराई । परवीन का इशारा पाकर सब बैठीं । ड्राइवर सबको कॉलेज की बोर्डिंग पर पहुँचा आया । उससे किराया पूछा गया तो उसने किराया लेने से इंकार कर दिया । उसने बताया कि किराया महमूद साहब देंगे, और फिर उसने इतना अपनी तरफ़ से कह दिया कि मुझे जल्द वहाँ पहुँचना है । अभी-अभी सिराज साहब "मौजूदा समाज की बदहाली" पर तक़रीर

करेंगे । मैं भी सुनूँगा ।"

भला उससे कोई पूछे कि यह कहने का यहाँ क्या मौक़ा था । मगर वह जो किसी ने कहा है कि इनसान जिस बात से कटना चाहता है, वह उसे और अधिक जकड़ती है । परवीन के लिए यही क्या कम था कि सिराज से उसकी मुठभेड़ हो गई थी, उसपर यह ड्राइवर उसकी तारीफ़ कर गया । वह देर तक झुँझलाई-सी रही । फिर रात को हमीदा ने खाना खाते-खाते कहा—"बाजी ! वह लेक्चरर साहब कितने अच्छे थे । अगर उस वक़्त अपनी टैक्सी न देते तो हमें देर हो जाती ।"

परवीन कुछ न बोली । हमीदा को लेक्चरर साहब, वही काले-कलूटे सिराज साहब अच्छे लग रहे थे । परवीन को याद है, उसके बाप ने नसीहत करते हुए एक जुमला कहा था—"वास्तव में किरदार का नूर चेहरे पर झलकता है, तो काला आदमी भी ख़ूबसूरत नज़र आने लगता है ।" आज परवीन ने सँजीदगी से ग़ौर किया तो उसे फ़ैसला करना पड़ा कि वह सिराज साहब के मामले में हद से गुज़र गई है । दरअसल वह इतना काला नहीं जैसाकि परवीन की नज़रें उसे देख रही थीं । ख़ैर, यही कुछ सोचते-सोचते परवीन नींद की गोद में पहुँच गई ।

इसके बाद परवीन ने यह एहतियात करनी शुरू कर दी कि जब उसे लड़कियों को लेकर कहीं जाना होता तो वह नक़ाब डाले रहती, ताकि सिराज कहीं आता-जाता देखे तो वह समझ न सके कि यह कौन आ रहा है या आ रही है । एक बार वह इसी एहतियात के साथ एक फ़ंक्शन से आ रही थी । लड़कियों ने ख़्वाहिश की कि बाजी आज़ाद पार्क रास्ते में बन रहा है, उसे दिखाती चलो । परवीन उनको लेकर वहाँ पहुँची, तो चन्द लड़कों ने शरारत शुरू कर दी । वे पहले तो दूर से फबतियाँ कसते रहे, फिर धीरे-धीरे क़रीब आने लगे । परवीन घबरा गई, इतने में एक तरफ़ से आवाज़ आई—"यह क्या बदतमीज़ी है ।"

यह डाँट सिराज की थी, उसने देख लिया था कि ये लफ़ंगे ख़ासकर उन लड़कियों में बुर्क़ापोश के पीछे लगे हैं । उसकी डाँट सुनकर लड़के तितर-बितर हो गए और फिर परवीन तुरन्त पार्क की सीमा से निकल कर एक टैक्सी पर कॉलेज की तरफ़ भागी । कॉलेज आकर वह यह सोच रही थी कि आज सिराज ने उसे नहीं पहचाना । एक औरत और उसके साथ बेबस बच्चों को गुंडे लड़कों से बचाने के लिए इस शरीफ़ ने शराफ़त का सबूत दिया ।

"शरीफ़ ने शराफ़त का सबूत" यह कैसी बात वह दिल ही दिल में कह गई । उसे याद आया कि उसके बाप ने भी इससे मिलती-जुलती एक बात कही थी । फिर उसे याद आया कि बाप ने यह भी कहा था, "बेटी ! हो सकता है कि तेरे काले सिराज की कोई अच्छी बात तुझे पसन्द आ जाए, तू सब्र कर ।"

आज उसे सोते-सोते ऐसा महसूस हुआ कि सिराज है तो काला, लेकिन नाक-नक़्शे का बुरा नहीं और यही सोचते-सोचते वह सो गई ।

और फिर एक दिन की घटना है । घटना नहीं, बल्कि दुर्घटना— वह लड़कियों के साथ क़िला देखने गई । वहाँ चन्द गुण्डों ने पहले 'ओ चाँद की किरण' कह कर उसे पुकारा । फिर इस इरादे से बढ़े कि उसका अपहरण कर लें । परवीन लड़कियों के साथ एक तरफ़ को बढ़ी । उधर कुछ लोग थे, लेकिन गुण्डे बीच में आ गए । उस वक़्त भी एक ज़ोरदार "ख़बरदार" की आवाज़ बुलन्द हुई और सिराज गुण्डों के सिर पर पहुँचा । लेकिन शायद आज गुण्डे "ख़बरदार" ही थे । एक ने कहा, "अबे ! क्या तेरी बहन थी, जो तुझे बुरा लगा ।" यह बात सिराज को लग गई । उसने फिर डाँटा, "क्या बकता है ।" इस डाँट के साथ ही रामपुरी कर्रेदार चाक़ू के खुलने की आवाज़ आई और जब तक सिराज पीछे हटा, चाक़ू उसकी रान पर पड़ा । वह ज़मीन पर 'हाय' कह कर गिरा । लोग दौड़ पड़े गुण्डे फ़रार हो गए । परवीन लड़कियों को लेकर भागी और उसने कॉलेज में आकर दम लिया । सँयोग से प्रिंसिपल शायद देख-भाल के लिए बोर्डिंग में आई हुई थी । उन्होंने हाल पूछा । परवीन तो कुछ न कह सकी । लड़कियों ने सारा हाल बताया । सुबह अख़बार में भी आ गया कि किस तरह ओरियन्टल कॉलेज के लोकप्रिय शिक्षक को चन्द गुण्डों ने ज़ख़्मी कर दिया । अख़बार से यह भी मालूम हुआ कि सिराज साहब अस्पताल में भर्ती हैं । बोर्डिंग की इंचार्ज श्रीमती कमलावती ने प्रिंसिपल से अस्पताल जाकर सिराज साहब को देखने की इजाज़त चाही तो प्रिंसिपल साहिबा ख़ुद चलने के लिए तैयार हो गईं । उन्होंने परवीन से कहा कि वह भी चल सकती है, लेकिन परवीन ने इनकार कर दिया और बहाना कर दिया कि वह डरी हुई है, फिर चली जाएगी ।

अस्पताल से वापस आकर प्रिंसिपल साहिबा और कमलावती ने सिराज साहब की तारीफ़ों के पुल बाँधे, "ग़ैर के लिए अपनी जान जोख़िम में डालते आज सिराज ही को देखा, जिस वक़्त हमने उनका शुक्रिया अदा किया तो कैसा शरमा गए थे और शरमाते वक़्त उनके चेहरे पर जो भोलापन छाया तो बिलकुल फ़रिश्ता नज़र आ रहे थे । ख़ुदा उनको जल्द अच्छा कर दे । हाय बेचारी उसकी बीवी कितना तड़प रही होगी । ख़ुदा उसका सुहाग क़ायम रखे ।"

यह तारीफ़ सुनकर परवीन तड़प गई । वह सुन न सकी । वहाँ से हट गई । वह अपने कमरे में जाकर लेट रही । लेट क्या रही, न जाने क्या सोच-सोच कर वह फूट-फूट कर रोने लगी । वह ख़ूब रोई, फिर जब उसका दिल ज़रा सम्भला तो उसने प्रिंसिपल साहिबा से इजाज़त ली कि वह भी मास्टर साहब को देखने

जाएगी। उसे इजाज़त थी ही। इजाज़त पाकर वह पहले घर गई। वहाँ सुना की माँ सिराज को देखने गई है। उसने बुआ को साथ लिया और अस्पताल को चल दी। जिस वक़्त वह मरीज़ के ख़ास वार्ड में पहुँची तो वहाँ उसकी माँ और उसकी सास दोनों मौजूद थीं। उसकी माँ उसकी सास से रो-रोकर मानो अपना दिल दुखा रही थी और सास 'क़िस्मत की बात क़िस्मत की बात' कह रही थीं। सिराज उस वक़्त सो रहा था। दोनों ने परवीन को आता देखा तो बाहर निकल गईं। परवीन ने सास को सलाम किया। फिर जब पलट कर देखा कि दोनों नज़र से ओझल हैं तो बुआ से कहा कि वह भी बाहर जाए। कोई नर्स भी क़रीब न थी। वह मरीज़ को देखने लगी और सोचने लगी कि अगर इस वक़्त ये जाग जाएँ तो वह क्या कहेगी और वह क्या कहेगा।

लगभग 15 मिनट के बाद उसकी माँ और सास फिर कमरे में आईं तो दोनों हैरान रह गईं। परवीन मरीज़ के पैर पीले-पीले हाथों से दबा रही थी और आँखों से आँसू बहा रही थी। दोनों औरतें यह देखकर उल्टे पाँव वापस हो गईं और उन्होंने बुआ को भी अपने पास बुला लिया, जो परवीन के पास जा रही थी। दोनों दुनिया देखे हुए थीं। समझ गईं कि परी आप से शीशी में उतर गई। समधिनें आपस में एक-दूसरे को मुबारक बाद दे रही थीं।

बहन

रज़िया और सकीना भी तन-मन से क़िरअत (शुद्ध उच्चारण और अच्छी आवाज़ के साथ क़ुरआन पाठ) के मुक़ाबले की तैयारी में मगन थीं । रज़िया सकीना से दो साल छोटी थी । रज़िया की उम्र 13 साल की थी और सकीना 15 साल की थी । वे दोनों सगी बहनें थीं ।

इससे पहले मदरसा इस्लामिया निस्वाँ में क़िरअत के जो मुक़ाबले हो चुके थे, उनमें सकीना ने हमेशा अव्वल नम्बर हासिल किया और रज़िया दूसरे नम्बर पर आती रही । रज़िया को कभी ख़याल नहीं आया कि बड़ी बहन सकीना के मुक़ाबले में उसका दूसरा स्थान क्यों हासिल हुआ । लेकिन इस बार वह इस कोशिश में थी कि सकीना से बढ़ जाए । पहला स्थान ख़ुद हासिल करे । इस शौक़ ने उसकी कोशिश को इतना तेज़ कर दिया था कि उसे खाने-पीने और पहनने-ओढ़ने की भी फ़िक्र नहीं रह गई थी । सकीना उसे खाने के वक़्त पकड़ ले जाती और न चाहते हुए भी उसे दस्तरख़्वान पर जाना पड़ता । सकीना उसे यह भी समझाती कि वक़्त-बेवक़्त खाने-पीने से आवाज़ पर बुरा असर पड़ता है और हर वक़्त पढ़ते रहने से गला ख़राब हो जाता है ।

सकीना की हैरत की सीमा न रही जब एक दिन वह रज़िया को क़िरअत के उसूल बताने में मदद देने लगी तो रज़िया ने झिड़क दिया, "मैं नहीं लेती तुम्हारी मदद !" सकीना मुँह तक कर रह गई । उसे याद आया, एक दिन वह क़िरअत की मश्क़ ख़ुद ही कर रही थी— उसे याद आया— रज़िया दरवाज़े से लगकर खड़ी सुनती रही और फिर अम्मी से जाकर बोली— "अगर आपा जान न हों तो मैं इस बार अव्वल आ सकती हूँ ।"

उस वक़्त तो सकीना हँस दी, लेकिन आज जब रज़िया ने झिड़क दिया तो उसे यह महसूस हुआ कि शायद रज़िया हसद की आग में सुलगने लगी है । उसने मौक़ा पाकर एक दिन उसे फिर पकड़ा और समझाने लगी । भन्नो तू ही अव्वल आएगी । अल्लाह करें तू ही अव्वल आए । अब तो मेरी आवाज़ मोटी हो गई है, मैं सोचती हूँ कि मुक़ाबले में शामिल न होऊँ ।"

"सच आपा जान !" रज़िया चमक उठी ।

"सच भन्नो ! क़सम ले लो ।"

"और अगर अब्बाजान ने डाँटा तो ?"

सकीना इस सवाल के जवाब में रज़िया को मुतमइन न कर सकी और फिर जब रज़िया ही ने धीरे-धीरे माँ से और फिर माँ ने क़ाज़ी इर्शाद अहमद साहब से कहा कि सकीना का इरादा यह है, तो वास्तव में उन्होंने सकीना को बहुत डाँटा और फिर बीवी से तन्हाई में कहा कि जामा मस्जिद के इमाम का बेटा क़ारी जव्वाद इस शर्त पर शादी करने पर राज़ी हुआ है कि सकीना मुक़ाबले में अव्वल आए ।

यह सुनकर माँ ने ख़ामोशी इख़तियार कर ली और फिर जब कभी बात आई तो माँ ने बड़ी बेटी को हिकमत से सब कुछ बता भी दिया ।

माँ-बाप को सकीना की शादी की फ़िक्र खाए जा रही थी । दोनों ख़ुश थे कि सकीना मुक़ाबले में ज़रूर अव्वल आएगी और उसकी शादी एक अच्छे घराने में हो जाएगी । सकीना न जाने क्या सोच रही थी, वह रज़िया को अक्सर उदास देखती और किसी ख़याल में खो जाती । मौक़ा मिलता तो वह छोटी बहन का हौसला बढ़ाती कि हिम्मत न हार अब की बार सबसे ज़्यादा नम्बर तेरे ही आएँगे ।

रज़िया यह सब सकीना का दिखावा समझती और कभी-कभी कुछ तंज़ भी महसूस करती । वह माँ-बाप के डर से मुक़ाबले की तैयारी तो ज़रूर कर रही थी, लेकिन उसे उम्मीद नहीं थी कि बड़ी बहन के मुक़ाबले में उसे पहला इनाम मिल सकेगा ।

कहानी संक्षेप में यह कि मुक़ाबले का दिन आया । मदरसा इस्लामिया निस्वाँ में बड़े इन्तिज़ाम किए गए थे । नम्बर देनेवालों में अन्दर तीन बेहतरीन क़ारी औरतें थी और परदे के बाहर दो पुराने बूढ़े क़ारी ।

मदरसा इस्लामियाँ निस्वाँ का हाल औरतों से भरा हुआ था । सामने स्टेज पर कुछ बाइज़्ज़त औरतों के साथ वे लड़कियाँ बैठी हुई थीं जो मुक़ाबले में हिस्सा लेनेवाली थीं । सभा के अध्यक्ष के संक्षिप्त अभिभाषण के बाद मुक़ाबला शुरू हुआ । कमसिन बच्चियों की मुतरन्नुम आवाज़ वातावरण में गूँजी और इस गूँज में कलाम पाक के मीठे बोल लोगों ने सुने तो झूम उठे ।

क़िरआत करनेवाली लड़कियाँ एक-एक करके आती रहीं । क़िरअत करके अपनी जगह वापस जाती रहीं, सुननेवाले एकाग्रचित्त होकर सुनते रहे और नम्बर देनेवाले नम्बर देते रहे । इसी बीच मुहतरमा अध्यक्ष साहिबा ने सकीना का नाम लिया । सकीना अत्यन्त इतमीनान से उठी । लोगों की नज़रें उस पर जम गईं । वातावरण शांत हो गया । अचानक सकीना ने "अऊज़ु बिल्लाहि मिनूश्शैतानिर्रजीम" के अल्फ़ाज़ मुँह से निकाले, उफ़ एक अत्यन्त घृणास्पद मोटी और भद्दी-सी आवाज़ भीड़

ने सुनी और फिर सकीना को खाँसी का ठनका जो शुरू हुआ तो खाँसती रही और सुननेवाले अपनी नज़रों से मानों कहने लगे, "अरे, इसे क्या हो गया है !"

सकीना ने खाँस कर अपना गला साफ़ किया और फिर 'बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम' पढ़ी । अब तो मदरसा इस्लामिया निस्वाँ के हाल के वातावरण में गड़बड़ी पैदा हो गई । सकीना की माँ अपनी जगह खड़ी हो गई और उसने कलेजा पकड़ लिया, "हाय मेरी बच्ची ! सकीना सूए इख़लास पढ़कर उठ गई और जिस इतमीनान से क़िरअत करने आई थी, उसी इतमीनान के साथ उठकर अपनी जगह बैठ गई । रज़िया उसकी नाकामी पर बहुत ख़ुश हुई और फिर जब उसका नाम पुकारा गया तो उसने बढ़े हौसले और उम्मीद के साथ क़िरअत की । सुनने और देखनेवाले बड़ी उम्र के लोग तो अलग रहे, नासमझ बच्चियाँ भी अपनी जगह खड़ी होकर रज़िया को देखने लगीं ।

रज़िया ने बेहतरीन तजवीद (सुर और लय) के साथ क़िरअत की । इसके बाद शेष लड़कियों ने हिस्सा लिया । फिर पहला इनाम का एलान किया गया तो रज़िया का सिर गौरव से ऊँचा हो गया । ख़ुदा जाने यह उसका तंज़ था या सआदतमंदी (शराफ़त), उसने इनाम का कप लाकर सकीना के आगे रख दिया । सकीना ने मुस्कुरा कर रज़िया का मुँह चूम लिया और उसे मुबारकबाद दी ।

इनाम तक़सीम होने के बाद जलसा ख़त्म हुआ । औरतें ख़ुश-ख़ुश अपने घरों को गईं । हाँ, एक औरत ज़रूर रोती हुई वापस हो रही थी । यह औरत थी क़ाज़ी इर्शाद अहमद साहब की बीवी, नाकाम सकीना और कामयाब रज़िया की माँ । उसके सीने से आह उठती थी, और वह कह रही थी कि हाय! अब सकीना का क्या बनेगा ।

क़ाज़ी साहब ने भी इस ख़बर को हादसे की तरह सुना, वे भी दिल पकड़ कर रह गए ।

शाम को उन्हें जामा मस्जिद के इमाम का परचा मिला कि बेटा क़ारी जव्वाद रज़िया से शादी करने पर तो राज़ी है और वह उसके लिए दो-तीन साल इन्तिज़ार भी कर सकता है, लेकिन सकीना से किसी भी हाल में शादी करने के लिए तैयार नहीं । अगर आपको स्वीकार हो तो लिखित स्वीकृति दे दें, वरना मैं कहीं और अपने बेटे के लिए पैग़ाम दूँ ।

अच्छे लड़के आजकल कहाँ मिलते हैं । रज़िया के लिए ही स्वीकृति दे दी गई और सकीना के लिए वर तलाश किया जाने लगा । बड़ी मुश्किल से एक लड़का हाथ आया और माँ-बाप ने बड़ी हसरत के साथ उसी के निकाह में सकीना को दे दिया । सकीना ने ख़ुशी-ख़ुशी क़बूल कर लिया और अपने शौहर के घर

चली गई । चलते वक़्त उसने अपना बस्ता माँ को देकर कहा, ''इसमें मेरी किताबें और कॉपियाँ हैं । इन्हें रख लीजिए । दो वर्ष के बाद रज़िया कक्षा 8 में पहुँच जाएगी, तब इसे दे दीजिएगा । यह मेरी तरफ़ से उसके लिए तोहफ़ा है ।''

माँ ने बस्ता रख लिया । सकीना घरवाली हो गई । दो वर्ष के बाद जब रज़िया कक्षा 8 में आई तो बहन का बस्ता उसे मिला । उसने बड़े शौक़ से खोला । किताबों और कॉपियों पर नई जिल्दें बंधी हुई थीं । रज़िया बहुत ख़ुश हुई । शाम को उसने सोचा कि आपाजान की कॉपियों से लिखे हुए पेज अलग कर देने चाहिए ताकि उस्तानी साहिबा न डाँटे ।

वह एक-एक पेज बड़ी सावधानी के साथ फाड़-फाड़ कर निकाल रही थी । इस तरह कई कॉपियाँ उसने सादा कर लीं । अचानक एक कॉपी के एक पृष्ठ पर उसकी नज़रें जम गईं । उसने पढ़ा । लिखा हुआ था—

''रज़िया को यक़ीन नहीं आता, वह मेरे होते हुए अव्वल आएगी । मेरा भी ख़याल है कि वह मेरे मुक़ाबले में अधिक नम्बर हासिल न कर सकेगी, तो क्या मैं ख़ुद पहला इनाम लेकर अपनी प्यारी रज़िया को उदास कर दूँ । नहीं, नहीं ! मैं हरग़िज उसे उदास नहीं देख सकती । तो मुझे क्या करना चाहिए ? हाँ, ठीक है, थोड़ा-सा सिन्दूर फाक लेना चाहिए, ताकि गला बैठ जाए और वक़्त पर क़िरअत अगर मैं चाहूँ भी तो अच्छी क़िरअत न कर सकूँ ।''

यह पढ़ते ही रज़िया के मुँह से एक चीख़ निकल गई । वह वहीं बेहोश हो गई । माँ-बाप दौड़े । बेटी के पास कॉपी खुली हुई पड़ी थी । उन्होंने भी वह लेख पढ़ा । उनकी आँखों से गंगा-यमुना बह पड़ीं और वे रज़िया को होश में लाने की तद्बीरें करने लगे ।

मोम की गुड़िया

"अम्मी जान ! अम्मी जान ! सलमा आ रही है," ज़रीना हाँफते हुए कह रही थी, "तुम जल्दी से जाकर कपड़े बदल लो, अम्मी जान ! ईदवाला जोड़ा पहनना, अम्मी जान !"

अम्मी बरतन धो रही थीं । उन्होंने ज़रीना की तरफ़ देखा । उन्हें ऐसा महसूस हुआ जैसे ज़रीना के लिए भूकम्प आ गया हो ।

"बड़ी ख़ुशी की बात है बेटी । अच्छा तो मैं ये बरतन ठिकाने से रख दूँ ।"

"न, आप तो जल्दी से अच्छा जोड़ा पहन लीजिए । यह बरतन मैं धोए डालती हूँ ।"

अम्मी जान को हँसी आ गई । फिर पूछा, "बेटी सुन तो ! मैं जोड़ा क्यों पहन लूँ, क्या कोई मुझे देखने आ रहा है ?"

"ऊँह, तुम तो हर बात में बहस करने लगती हो, अम्मी ! देखो तो तुम्हारे कपड़े कैसे मैले हो रहे हैं । वह देखेगी तो क्या कहेगी ?"

"कहेगी क्या बेटी ! सलमा तेरी सहेली है, वही तो आ रही है । उसके सामने संकोच क्या, मेरी भी तो वह बेटी हुई ।"

"हाँ, होगी सब, तुम बरतन छोड़ दो बस । अब वह पहुँचने ही वाली है ।" ज़बरदस्ती ज़रीना ने बरतन खींच लिए और खंगालकर एक तरफ़ रख दिए ।

अम्मी की समझ में कुछ न आया कि ज़रीना उन्हें हुक्म दे रही है या अनुरोध कर रही है । वह कपड़े बदलने चली गईं । वहाँ आप ही आप कह रही थीं, "मालूम नहीं ज़रीना को क्या हो गया है, कैसी भोली-भाली थी । लेकिन जब से कॉलेज में एडमीशन लिया है, चटक-मटक से रहने लगी है । बिलकुल ही तो बदल गई, सिर्फ़ चार महीनों में ! कल ही तो मैं समझा रही थी कि भिन्नो, हम कोई रईस नहीं हैं, जो मिल जाया करे पहन लिया करो । जवाब दिया कि चाहे खाने को न दो, मगर जोड़ा भड़कदार हो, वहाँ सब बनी-ठनी रहती हैं । अम्मी जान ! "कैसा दिखावा आ गया है, अम्मी जान की बच्ची में ।"

अम्मी जान ने एक सादा-सा साफ़ जोड़ा पहन लिया जैसी एक गृहस्थ होती है और पहना करती है । कुछ सोच कर वह ओंठों में बड़बड़ाने लगी ।

उस दिन कैसा तड़ से जवाब दिया उसने, "माँ, अगर हमें इज़्ज़त क़ायम रखनी

है तो ऊपर उठना होगा। फिर न जाने किस शायर का शेर पढ़ा जिसका मतलब यह था कि हमें ज़मीन की पस्ती की तरफ़ नहीं देखना चाहिए, आसमान की ऊँचाई की तरफ़ नज़र रखनी चाहिए।" दीवानी यह नहीं जानती कि जो आसमान की तरफ़ देखता है, ज़मीन में ठोकरें खाता है।

अम्मी को ग़ुस्सा भी आ रहा था और हँसी भी। उन्होंने आज तय कर लिया था कि वह ज़रीना को सबक़ देकर रहेगी, मगर इस तरह कि उसे बुरा न लगे।

आज सलमा अकेली न थी। उसके साथ उसकी अम्मी भी आईं। उन्हें देख कर ज़रीना ख़ुशी के मारे फूली न समाई। "कितनी हँसमुख हैं सलमा की अम्मी, कितना अच्छा है उनका ड्रेस ! जम्पर का गला तो ऐसा बनाया है कि बस वाह ही वाह और कलीदार पैजामा में कैसी उम्दा छींटें हैं और सलमा—उफ़ मेरे अल्लाह ! वह पूरी सलमा सितारा बन गई है।"

"आइए आंटी ! आज तो बहुत दिनों के बाद आपको हमारी याद आई।" ज़रीना ने दिल ही दिल में अपने लफ़्ज़ों की दाद दी। उसकी अम्मी अभी बाहर नहीं आई थीं। ज़रीना ख़ुशी से पुकारी, "अम्मी जान !" आवाज़ के साथ ही उसकी अम्मी जान बाहर आती दिखाई दीं, और ज़रीना का खिला हुआ चेहरा एकदम मुरझा गया। उसने बुरा-सा मुँह बनाया।

"कैसा, कैसा कह दिया था और अब बन-ठन कर आई हैं। तौबा-तौबा, वही सफ़ेद शलवार, वही पुराना जम्पर और मोटा-सा दुपट्टा।" ज़रीना ने अपनी लाज बचाने के लिए सलमा का हाथ पकड़ा और अपने कमरे में खींच ले गई। उसकी अम्मी सलमा की माँ से बड़े तपाक से मिलीं। आधे घण्टे ही में दोनों ऐसा घुल-मिल कर बातें करने लगीं जैसे उनके दरमियान कोई तकल्लुफ़ ही न हो और जैसे वे एक जान दो दिल हों। कभी तो वे एक दम संजीदा हो जातीं और कभी इस तरह हँसती की उनकी हँसी की आवाज़ ज़रीना के कमरे में सुनाई देती। इस आवाज़ से ज़रीना ने महसूस किया कि इतनी अपनाइयत और बेतकल्लुफ़ी चार महीने में सलमा से उसकी न हो सकी। उसका विचार था कि अम्मी जान हीन भावना से ग्रस्त होंगी और सलमा भाँप लेगी। इसी लिए वह उधर घसीट लाई थी और झूम-झूम कर बातें कर रही थी।

"कल तूने कमला को देखा था, कैसी गुड़िया-सी बन कर आई स्कूल में। सब उसे ही देख रहे थे।" दोनों हँसने लगीं। उस वक़्त ज़रीना की हसरत भरी निगाहें सलमा की पहली स्कर्ट पर जम कर रह गईं और वह अपनी आह को दबा न सकी। कब से वह अब्बा-अम्मा से उसके लिए हठ कर रही थी, मगर यहाँ बस वही पैसा बीच में आ जाता था। "आज मेरे पास भी स्कर्ट होती तो—!,"

उसने दिल ही दिल में अपनी ग़रीबी महसूस की और उदास हो गई ।

"क्या तीन ही कमरे हैं तुम्हारे पास ?" सलमा पूछ बैठी । ज़रीना और अधिक उदास हो गई । "ऐसे पूछ रही है जैसे पहली बार आई हो ।" उसने दिल-ही-दिल में कहा और जवाब में बोली, "सलमा ! यह वही स्कर्ट है ना जो तूने उस दिन फ़ंक्शन में पहना था और उस दिन भी जब स्कूल में इन्दिरा जी पधारी थीं ।" इस तरह मानो उसने तीन कमरों वाली बात, बात नहीं, छिपे हुए तंज़ का जवाब दे दिया । मतलब यह कि तू भी तो एक स्कर्ट महीनों से पहन रही है । फिर मेरे पास तीन ही कमरे हैं तो क्या हुआ ।

लेकिन उसके जवाब में जब सलमा ने बताया कि उसके अब्बाजान ने कानपुर से क़मीज़ और चूड़ीदार पाजामें का कपड़ा भेजा है, तू आएगी तो दिखाऊँगी तो ज़रीना दिल मसोसकर रह गई । उसने पूछा, "किस रंग का है ? मेरे ख़ालू जान ने बम्बई से भेजा था, मगर उसका रंग मुझे पसन्द नहीं था । मैंने फूफी की लड़की सईदा को दे दिया ।"

इसका जवाब सलमा ने कुछ नहीं दिया । फिर कहने लगी, "कितनी गरमी है यहाँ, हमारा घर ख़ूब खुला है । हवा ख़ूब आती है । इस बन्द घर में मुझ से रहा न जाए ।" और इसके जवाब में ज़रीना उठ खड़ी हुई, "ख़ुशी में यह तो भूल ही गई कि चाय-वाय बनाऊँ । चलो ज़रा अम्मी जान के पास बैठो, मैं अभी लाती हूँ ।"

"तुम बेकार तकल्लुफ़ कर रही हो," कहती हुई सलमा उठ खड़ी हुई । दूसरे कमरे में पहुँच कर दोनों दंग रह गईं । किस ठाठ से दोनों की बातें हो रही थीं । ज़मीन पर बिछे हुए गद्दे पर बैठी थीं । सलमा ने पहुँचते ही माँ पर आवाज़ कस ही दी ।

"मम्मी साहब ! आज तो पूरी इंडियन बन गई हो ।"

"बन क्या गए, हैं ही हिन्दुस्तानी, क्यों बहन ठीक है ना ।" सलमा की अम्मी ने एक साँस में उससे और ज़रीना की माँ से कहा ।

"और क्या," ज़रीना की अम्मी कहने लगीं, "हिन्दुस्तानी तो हैं ही । मैं तो ज़रीना को समझाती हूँ कि अपनी आन कभी नहीं खोना चाहिए, झूठी शान कभी नहीं दिखानी चाहिए । मगर वह तो फ़ैशन के पीछे दीवानी हुई जा रही है ।"

ज़रीना का चेहरा एकदम उतर गया । चाय बनाने के बहाने वह बावरची खाने की तरफ़ भाग गई, मगर उसके कान उसी तरफ़ थे ।

"हाय, अम्मी जान अब तो घर का पूरा पोल खोल देने पर तुल गई हैं ।

क्या-क्या कहे जा रही हैं । इस छोटे-से घर की तारीफ़ कर रही हैं । कहती हैं कितना कम किराए पर मिल गया है । लो, अब्बा जान की तनख़्वाह भी बता दी । आख़िर यह कहने की ज़रूरत क्या थी कि घर में कोई नौकर नहीं है । घर का काम वह ख़ुद और ज़रीना दोनों मिलकर कर लेती हैं ।

ज़रीना का सिर घूम गया । उसे याद आया । उसने सलमा के सामने कैसी-कैसी डींगें मारी थीं । सभी लड़कियाँ यही जताती हैं, मगर किसी की माँ काहे को इस तरह अपना भण्डा-फोड़ती है । ज़रीना की समझ में कुछ नहीं आ रहा था कि अम्मी यह सब दुखड़ा क्यों ले बैठीं । भोलेपन की भी एक हद होती है । सलमा की माँ ने यह कब पूछा था, जिसके जवाब में यह बकवास शुरू कर दीं ।

चाय बना कर उसने ट्रे में रखी । ट्रे उठाकर कमरे में आई तो उसे ऐसा महसूस हुआ कि उसके पैर मन-मन भर के हो गए । वह सलमा की तरफ़ बढ़ी । सलमा के चेहरे पर नज़र पड़ी तो वह सोचने लगी, यह क्यों उदास हो रही है । अच्छा यह बात है । उसकी मम्मी अब अपनी राम कहानी सुना रही थीं—

"अल्लाह का शुक्र है, दोनों वक़्त आराम से दो रोटियाँ मिल जाती हैं । लेकिन वह दिन मैं अब तक नहीं भूली हूँ, जब मैं अपने हाथों से दूसरे लोगों के कपड़े सीती थी और तब भी एक ही वक़्त का खाना मिलता था ।" सलमा की माँ की आवाज़ दुख भरे दिनों की याद से भर्रा गई और सलमा ने बुरा-सा मुँह बनाया ।

ज़रीना की अम्मी ने कहा, "लीजिए अब आप ही इस पगली को समझाइए । जब आप आ रहीं थीं, उस वक़्त मैं बरतन धो रही थी, यह मुझ से कह रही थी कि ईद का ज़ोड़ा पहन लो ।"

दोनों बुज़ुर्ग औरतें हँस पड़ीं । ज़रीना बेहद शर्मिन्दा हुई । लजाई हुई सलमा भी बैठी थी । सलमा की मम्मी ने कहा, "आओ बेटी ज़रीना ! क्या अच्छा नाम है तुम्हारा और कैसी अच्छी हो तुम !" वे उसके सिर पर हाथ फेरने लगीं, "बड़ी अच्छी भिन्नों है ।" फिर इस तरह समझाने लगीं, "बेटी ! चादर देखकर पांव फैलाते हैं । दिखावा करने से ख़ुशी नहीं होती, बेटी ! दिखावा करनेवाले एक तरफ़ झूठ बोलते हैं, दूसरी तरफ़ उनके झूठ का पोल खुल कर रहता है । तब उनको बिला वजह शर्मिन्दा होना पड़ता है ।"

ज़रीना ने नीची नज़रें किए हुए सलमा को देखा, वह भी झेंपी हुई उसे देख रही थी । दोनों एक-दूसरे को देखकर मुस्काराईं । दरअसल दोनों को एक क़ीमती चीज़ मिल गई थी । दोनों के ज़ेहनों में एक बेदारी पैदा हो गई थी, ऐसी बेदारी जिसमें बनावट नहीं और न उसमें फ़ैशन की झूठी चमक थी ।

नक़ली रोज़ा

मैं एक मॉडर्न ख़ानदान में पैदा हुई । मेरे वालिद आई०सी०एस० हैं और अब एक लम्बे समय से अकेले रहते हैं । मेरी माँ एक रईस ख़ानदान से थीं । वे पढ़ी-लिखी नहीं थीं, लेकिन अत्यन्त ख़ूबसूरत और मालदार घराने के आँखों का तारा थीं । मेरे वालिद साहब ने (वे स्वयं बताते हैं) उनसे शादी सिर्फ़ उनके हुस्न और माल की वजह से की थी । अल्लाह तआला ने बरकत दी और हम सब सात भाई-बहनें हैं । सबसे बड़ी मैं हूँ । वालिद साहब ने हमें उच्च शिक्षा दिलाई और अब हम सब अपने-अपने घर ख़ुश हैं । मेरी अम्मी को, जो अब इस दुनिया में नहीं हैं, अल्लाह तआला उन्हें सुख-शान्ति प्रदान करे और सलामती के घर में दाख़िल करे ।

हमारे ख़ानदान में सिर्फ़ माँ ही ऐसी थीं जो रोज़ा-नमाज़ की पाबन्द थीं । वालिद साहब आई०सी०एस० थे । ज़ाहिर है उनको दीन से क्या सम्बन्ध हो सकता था । फिर हम सब ने पश्चिमी शिक्षा पाई और पश्चिमी तर्ज़ पर ही तरबियत पाई । नतीजा यह हुआ कि हम सब माँ को रोज़ा-नमाज़ और सद्क़ा-ख़ैरात करते देखते तो मज़ाक़ उड़ाते । हम सब भाई-बहनों के शब्द ये होते थे—

"अम्मी इससे क्या फ़ायदा । रोज़ा रख कर दिन भर भूखे मरना यह क्या अक़्लमंदी है । आप नमाज़ों में जो समय बरबाद करती हैं, उतनी देर में कोई मनोरंजन कर लीजिए । यह जो संडे-मंडे फ़क़ीरों को ख़ैरात देती हैं, तो उनके बदले हमारे फ़ंक्शनों में चन्दा दीजिए तो नाम हो ।"

और तौबा है, वालिद साहब को अक्सर हमने देखा कि अम्मी जब नमाज़ पढ़ रही होतीं तो वे जानेमाज़ खींच लेते थे । अब जबकि अल्लाह ने मेरी आँखें खोलीं और मैं दीन को कुछ-कुछ समझती हूँ, तो अपनी और घर की बेअदबियों पर काँप जाती हूँ—तौबा !

अच्छा तो इस भूमिका के बाद मैं यह बताना चाहती हूँ कि मैं दीन की तरफ़ किस तरह मुड़ी । उस वक़्त मेरी उम्र भी 22 वर्ष की थी । एम०ए० कर चुकी थी और एज़ाज़ी (अवैतनिक) तौर पर एक स्कूल में टीचर थी । उस स्कूल में मिस जमीला एक और शिक्षिका महोदया तशरीफ़ लाईं । ये मेरी हम उम्र थीं । अत्यन्त भोला-भाला चेहरा, हँस मुख, सादे कपड़ों में वही वह थीं, हम सबसे अलग । अकेला मेरा दिल न जाने क्यों उनकी तरफ़ ख़िंचने लगा । रईस घराने

की तो मैं थी ही । किसी से दोस्ती करने के लिए दस-बीस रूपया ख़र्च कर डालना मेरे लिए साधारण-सी बात थी ।

मैंने उसी वक़्त 'टी पार्टी' जमा दी । लेकिन मेरी हैरत की सीमा न रही जब जमीला साहिबा ने फ़रमाया, "बहन ! मैं तो रोज़े से हूँ ।"

उनका रोज़ा उस वक़्त मुझे खला । अगर मैं थोड़ा शिष्टता से काम न लेती तो उस वक़्त ख़ुदा जाने क्या कह और कर डालती । फिर भी मेरी ज़ुबान से निकल गया, "न जाने लोग रोज़ा रखने की हिमाक़त क्यों करते हैं ?"

"हिमाक़त !" मिस जमीला ने चौंक कर मुझे देखा, "क्या आप मुसलमान नहीं हैं ?"

"मुसलमान तो हूँ," मैंने जवाब दिया ।

"तो बहन रोज़ा फ़र्ज़ है, अल्लाह का हुक्म है । रोज़ा रखो ।"

"क्यों रखूं ?" मेरी ज़ुबान से झुंझलाहट के साथ निकला ।

"अर्ज़ किया ना ! अल्लाह ने हुक्म दिया है ।"

"फ़ायदा," मैंने एक सेब उठा लिया, दूसरी तरफ़ शमीम ने कुहनी मारी, "हटाओ भी इन्हें मुँह तकने दो । आओ, हम सब खाएँ-पिएँ । इस दरमियान मिस जमीला कह रही थीं—

"बहन ! फ़ायदे तो बहुत हैं । लेकिन मैं इस वक़्त उन्हें गिनाना नहीं चाहती । ख़ुद रख कर क्यों न देख लीजिए, क्या फ़ायदे हैं रोज़े रखने से ।"

"बहुत अच्छा सरकार !" एक तरफ़ से अख़्तर चहकी । मिस ज़मीला के आने का वह पहला दिन था । ख़ैर हमने अधिक बेतकल्लुफ़ी का प्रदर्शन नहीं किया । हम सब खा-पी रहे थे । मिस जमीला उठ कर ज़ुहर की नमाज़ पढ़ने लगीं ।

"किस क़द्र ख़ुश्क जिन्दगी है उसकी !"

"बेशक ! अंग्रेज़ी शिक्षा हासिल करके भी मुल्लानी ही रही ।"

"अरे ! उसे कोई दाढ़ीवाला मुल्ला पसन्द आ गया होगा, तभी तो !"

"किसी ऐसे-वैसे घराने की मालूम होती हे ।"

ये और ऐसी ही बातें हम सब करती रहीं । इधर हम सब फ़ारिग़ हुए उधर मिस जमीला, जिनको अल्लाह से वास्ता पड़ा था, नमाज़ से निपटकर आ गईं । फिर हमने ज़्यादा बातें नहीं कीं । इन्टरवल ख़त्म हो चुका था । सब अपनी-अपनी

कक्षाओं में चली गईं ।

टाइम पूरा करने के बाद मिस जमीला बड़े तपाक से मिलीं । मैं बुझी-बुझी सी रही । ऊपरी दिल से लल्लू-पत्तू करके घर चली आई । मुझे दुख अपने रूपयों का था कि बेकार हो गए ।

रात को जब सोने के लिए लेटी तो वे रुपये याद आते रहे—हम सबकी मनबहलाव तथा हँसी-मज़ाक़ और मिस जमीला की वह ख़ुश्क ज़िन्दगी और फिर एक-एक करके वे सभी बातें भी— जो हम सबने इन्टरवल में की थीं, साथ ही मिस जमीला का वह जुमला कि रोज़ा रख कर ख़ुद देख लीजिए क्या फ़ायदा होता है ।

"ऊँह ! देखती तो हूँ अम्मी को, अधमरी हो जाती हैं । मैं भूखों क्यों मरूँ ।" मैं सोचते-सोचते झुझला गई । मैंने एक तरफ़ करवट ले ली । लेकिन हाय वे रुपये न जाने क्यों खल रहे थे । मैंने पार्टियों में हज़ारों रुपये ख़र्च किए, लेकिन वे कभी न याद आए, क्योंकि ख़ुशी के कामों में ख़र्च हुए थे ना ! और ये कुछ रुपये बर्बाद हो गए ।

"बहन ! रोज़ा रखकर देख लो ना !" ऐसा मालूम हुआ जैसे मिस जमीला की आवाज़ आई । मैंने मुड़कर देखा कोई न था । मेरे कान बज रहे थे । मैंने बुरा-सा मुँह बनाया । "इस जमीला को ठीक करना है," मैंने दिल में कहा । "कल झूठ-मूठ कह दूँगी कि रोज़े से हूँ । अख़तर, परवीन, लैला वग़ैरह तो मेरा पार्ट समझ जाएँगी । उन्हें मज़ा भी आएगा, लेकिन इस जमीला से पूछना है कि ले देख क्या फ़ायदा है ।"

मैं लेटे-लेटे मुस्कुराने लगी । कुछ सोच कर उठी खंखार कर अम्मी के कमरे में गई । वे नमाज़ पढ़ रहीं थीं । सलाम फेर कर मुझे देखा, पूछने लगीं, "क्या बात है ?"

"अम्मी रोज़ा रखकर क्या करते हैं ?" मैंने सवाल किया । मेरा ख़याल था कि थ्योरी अम्मी से पूछ लूँ ताकि जमीला को चिढ़ाने के लिए पूरा पार्ट अदा कर सकूँ ।

"करते क्या हैं, बेटी !" अम्मी ने बताना शुरू किया, "सुबह होने से पहले सहरी खाते हैं । फिर दिन भर कुछ नहीं खाते-पीते । बुरी बातें नहीं करते । कोई कुछ कहे तो सब्र करते हैं । ग़रीबों से हमदर्दी करते हैं । बस यही रोज़ा है ।"

"शब बख़ैर[1]" कहकर मैं चली गई । यह सब तो खा-पीकर भी हो सकता

---

1. आपकी रात सुख-शान्ति से बीते ।

है। मैं दिल ही दिल में दूसरे दिन के लिए कहानी सोचने और डॉयलॉग तैयार करने लगी। कुछ देर के बाद अम्मी मेरे कमरे में आईं। पूछने लगीं, "बेटी ! क्या कल रोज़ा रखने का इरादा है। अल्लाह तुझे हिम्मत दे।"

मैंने माँ का दिल रखने के लिए उत्तर दिया, "जी !"और वे ख़ुश होकर चली गईं और मैं मुस्कुरा दी। इसके बाद न जानें कब सो गई।

अम्मी ने मुझे आवाज़ दी। मैं चौंक पड़ी।

"बेटी ! क्या सपने देख रही हो। उठो सहरी खा लो।" अम्मी मुझे जगा रही थीं।

"क्यों खा लूँ ?"

"सेहरी का वक़्त हो गया है, बेटी !"

"तो मैं क्या करूँ ?"

"तुमने कहा था बेटी, रोज़ा रखने को।"

"छोड़िए भी, मैं कहाँ रोज़ा रखने की।"

"बेटी ! मैंने तेरे लिए सेब का मुरब्बा बनाया है, तूने कहा था, तो खाले सेहरी।"

"सेब का मुरब्बा !" मैं झट उठ बैठी। मैंने महसूस किया— उस वक़्त रात में अम्मी बहुत ख़ुश थीं। न्योछावर हुई जा रही थीं मुझ पर। "अल्लाह तुझको हिम्मत दे, कैसी नेक है, मेरी बच्ची ! अल्लाह तुझे नेकी अता फ़रमाए।"

"छोड़िए, अम्मी ये बातें, मुझे मुरब्बा दीजिए।"

"ले बेटी ! पहले मछली के कबाब खा ले। मैंने रात में जानमारकर तैयार किए हैं तेरे लिए।"

"मेरे लिए अम्मी !" मैं मुस्कुरा दी और खाने लगी।

"अहा ! बड़े मज़े के हैं।"

और फिर उस रात अम्मी ने बड़ी अजीब-अजीब नेमतें ख़िलाईं। खा-पी चुकी तो चाहा कि फिर सो जाऊँ लेकिन अम्मी ने कहा, "बेटी ! रोज़ा रखा है तो अब ज़रा देर में अज़ान होनेवाली है, वुज़ू करके नमाज़ पढ़ ले, फिर सो जाना।"

जी तो चाह रहा था कि कह दूँ कि अम्मी छोड़िए। मगर अंग्रेजी शिक्षा हासिल करके बहरहाल शिष्टता को हाथ से नहीं जाने दिया था। अम्मी ने नेमतें खिलाई थीं। उनका एहसान था।

ख़ुदा को नहीं अम्मी को ख़ुश करने के लिए नमाज़ पढ़ ली और पढ़ क्या ली, बस उठ बैठ ली, आती ही कब थी मुझे नमाज़ । उसके बाद फिर सो गई ।

सोकर उठी तो दिल ने चाहा कि चाय पी लूँ, मगर अम्मी जो थीं घर में । वालिद साहब ने, जिनको मैं पापा कहती थी, बुलाया भी कि परवीन ! चाय नहीं पिओगी !

"मैं रोज़े से हूँ ।"

मेरा यह कहना था कि पापा ने और मेरे भाई-बहनों ने ज़ोरदार क़हक़हे लगाए । मैं भी हँसने लगी ।

"आपाजान ! क्या कॉलेज में कोई ड्रामा है और तुम उसमें रोज़ेदार का पार्ट करोगी," मेरी बहन अनवर ने पूछा और फिर सब हँस पड़े ।

ग़रज़ की इस तरह सबने मुझे ख़ूब बनाया । सच जो पूछो, रोज़े की मेरी नीयत भी न थी । मैंने यह सोचा था कि अम्मी के दिल को दुख न हो । मैं होटल पर चाय पी लूँगी, बस इसी लिए अड़ी रही ।

"तो क्या वाक़ई तू रोज़े से है ?" पापा ने पूछा ।

"बिलकुल !" मैं मुस्कुराने लगी ।

"आख़िर माँ पे गई ना !" पापा ने कहा और चाय पीने लगे ।

मैंने दिल में कहा कि यह क्या आफ़त मोल ले ली । कॉलेज का वक़्त आया तो पापा ने कहा, "चल, मैं अपनी कार पर तुझे छोड़ आऊँ ।" मैं कार पर उनके साथ चली । रास्ते में पापा बोले, "होटल में कुछ खा पी लें, मैंने इनकार कर दिया । इनकार इसलिए नहीं कि मैं वाक़ई रोज़े से हूँ बल्कि इसलिए कि जब पापा से कह दिया है तो आन रह जाए । इन्टरवल तक तो भूख लगती नहीं है । इन्टरवल में खा-पी लूँगी ।

इन्टरवल तक वाक़ई भूख-प्यास न लगी, ख़ूब अच्छी-अच्छी चीज़ें जो खिला दी थीं अम्मी ने । इन्टरवल में पेट कुछ माँगने लगा और उम्र में पहली बार मुझे महसूस हुआ कि पेट की इस माँग का नाम भूख है । अख़्तर ने पूछा, "इस वक़्त ठण्डी क्यों हो रही हो, ख़ैरियत तो है ।"

"आज मैं रोज़े से हूँ ।"

वही क़हक़हा जो घर में बुलन्द हुआ था, यहाँ भी बुलन्द हुआ । समझ तो सब गई थीं, परवीन ड्रामा कर रही है । लेकिन मिस जमीला ने कहा,

"जज़ाकल्लाह[1] !" और फिर जब वे नमाज़ पढ़ने चलीं तो कहने लगीं, "बहन, रोज़ा रखा है तो आओ नमाज़ भी पढ़ लो ।"

न जाने मैं क्यों नमाज़ पढ़ने चली गई । मेरी इस हरकत से सबका ख़याल था कि अब मिस जमीला की दुर्गति होनेवाली है । मगर मैं उठक-बैठक करके चुपकी चली आई । बात यह थी कि अब मुझे भूख लग रही थी । मैंने अख़तर, शमीम और शाइस्ता को इशारा किया और सब को साथ लेकर चली । मिस जमीला देखती ही रह गईं । इच्छा थी कि जमीला साहिबा कि अनुपस्थिति में कुछ खा-पी लूँ । रास्ते में आवाज़ सुनी, "भगवान भला करें ।" देखा तो उम्र में पहली बार दिल में नरमी महसूस हुई । एक भिखारिन अपने बच्चे को गोद में लिए हाथ फैलाए हुए थी । मेरा हाथ ग़ैर-शऊरी तौर पर मनी बेग पर जा पड़ा । मैंने खोला और जो हाथ में आया निकाल कर उस औरत को दे दिया । मेरी सहेलियाँ हैरत करने लगी ।

"यह क्या किया तुमने ! तो क्या इस वक़्त सिर्फ़ चाय पर टालोगी ?"

"चाय भी नहीं ।"

"क्यों ?"

"आज मेरा रोज़ा है ।"

"इससे फ़ायदा ?"

"मैं कुछ नहीं जानती ।"

"तो क्या ख़ुद भूखी रहोगी ?"

"हाँ !"

"क्यों ?"

"एक भूखे का पेट भरने के लिए ।"

और मैं पलट पड़ी । सहेलियाँ जो सबकी सब टीचर थीं, दंग रह गईं ।

"वाह ! हम तो समझे थे कि यह ड्रामा हो रहा है, मगर......."

"मगर अब मैं सचमुच रोज़े से हूँ ।"

मैं वापस आ गई । मिस जमीला ने पूछा, "कहाँ गईं थीं और इतनी जल्दी क्यों वापस आ गईं ।"

---

1. अल्लाह आपको अच्छा बदला दे ।

"इन्टरवल ख़त्म होनेवाला है, जो ।"

और वाक़ई मुझे एक सवाल का जवाब आप से आप मिल गया—"रोज़ा भूखों से हमदर्दी के लिए रखा जाता है," मेरी ज़बान से आवाज़ के साथ निकल गया ।

"बेशक, नबी (सल्ल०)[1] ने फ़रमाया है कि यह सहानुभूति एवं संवेदना का महीना है ।" यह मिस जमीला की आवाज़ थी । अब सोचती हूँ कि मैंने दोपहर के बाद रोज़े की नीयत की थी, रोज़ा तो हुआ न होगा, लेकिन वह रोज़ा मेरे रोज़ों की भूमिका बन गया । इरादा कर लिया तो न जाने कहाँ से सब्र आ गया । हर रोज़ की होनेवाली झूठ-मूठ की बातों से मेरी टीचर दोस्त उस दिन महरूम रह गईं ।

धीरे-धीरे यह ख़बर प्रिंसिपल साहिबा को हुई । मिसेज़ कमलावती एक पुरानी और धार्मिक औरत थीं । उन्होंने मुझे बुलाया । हाल पूछा तो मैंने साफ़ कह दिया कि हाँ मैं रोज़े से हूँ । यह सुन कर वह बहुत ख़ुश हुईं । बोलीं—

"मिस परवीन, धर्म के बग़ैर कोई इनसान, इनसान नहीं बन सकता । वह भगवान का भय ही है, जो इनसान को बुराइयों से रोक सकता है और जहाँ तक मैंने अपने अध्ययन और अनुभव से समझा है, मैं कह सकती हूँ कि इस्लाम ने इनसानियत को सँवारने के लिए बेहतरीन उसूल दिए हैं ।"

प्रिंसिपल साहिबा ने पहली बार मुझ से इस तरह की बातें की थीं । मैंने उस दिन संजीदा और ग़ैरसंजीदा काम में स्पष्ट अन्तर महसूस किया लेकिन शाम होते-होते मेरा बुरा हाल हो गया ।

अस्र के वक़्त घर पहुँची तो न जाने बुआ ने क्या कहा और मैं उन पर बरस पड़ी । अम्मी दौड़ कर आईं, "बेटी ! यह सब्र का महीना है और सब्र के मायने हैं—बुरी बातों, ग़ुस्सा और झूठ के मुक़ाबले पर नेकी पर जमे रहना ।"

"सब्र के मायने तो मजबूरी के हैं, अम्मी !"

"बेटी ! यह उर्दू में ग़लत मानी में बोलने लगे हैं । वरना अरबी में यही हैं जो मैंने कहे ।"

उस दिन मुझे मालूम हुआ कि अम्मी बिलकुल अनपढ़ नहीं हैं और मेरे दिल में उनकी इज़्ज़त और महानता घर कर गई । फिर शाम तक मुझे बात-बात पर ग़ुस्सा आया, लेकिन मैंने सब्र से काम लिया । मुझे कुछ ऐसा महसूस हुआ जैसे

---

1. सल्ल० का पूर्णरूप है 'सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम' जिसका अर्थ है-अल्लाह उनपर रहमत और सलामती की बारिश करे।

मेरे अन्दर का इनसान जो सोया पड़ा था, जाग रहा है ।

मग़रिब के वक़्त जब मैंने रोज़ा खोला, तो वह पहला घूँट जो मैंने पिया उसकी लज़्ज़त उम्र भर न भूलूँगी । जन्नत की कैफ़ियतों का नाम मैंने सुना था कौसर[1] व तस्नीम[2] का मज़ा शायद ऐसा ही हो । मैंने अम्मी से पहली घूँट की लज़्ज़त और फिर उससे जो आनन्द और तृप्ति मिली थी, उसका हाल कहा तो बोलीं—

"नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया है..... मुझे हुज़ूर के पूरे शब्द तो याद नहीं । साराँश यह है कि रोज़ेदार को दो ऐसी नेमतें हासिल होंगी कि उनसे बढ़कर दूसरी नेमतें नहीं हो सकतीं । इस दुनिया में रोज़ा खोलने के वक़्त पहले घूँट की लज़्ज़त और आख़िरत में अल्लाह का दीदार ।"

"सच है अम्मी !" मेरी ज़ुबान से निकला था और वह दिन था और आज का दिन है, अब मैं दावा तो नहीं करती लेकिन फ़ख़्र ज़रूर है कि वाक़ई एक मुसलमान हूँ और क्या अर्ज़ करूँ, बड़ी लम्बी दास्तान है । फिर ज़्यादा वक़्त नहीं गुज़रा था, पापा और मेरे भाई और मेरी बहन सब इस्लाम के साँचे में ढल गए । अगर फ़ुर्सत मिली तो इंशाल्लाह[3] यह दास्तान भी एक दिन सुनाऊँगी ।

---

1. स्वर्ग का एक कुण्ड या हौज़
2. स्वर्ग की एक नहर
3. यदि ईश्वर ने चाहा ।

पहला इनाम

नुसरत चाय लेकर कमरे में आई तो देखा अब्बाजान उसी तरह सिर झुकाए उदास बैठे हैं । उसका नन्हा-सा दिल काँप उठा । उसने हिम्मत करके फिर एक बार पूछा, "अब्बाजान, अम्मी ठीक हैं ना ।"

"कह तो दिया भिन्नो ! ठीक हैं । वैसे आज ही तो ऑपरेशन हुआ है । इतनी जल्दी कैसे अच्छी हो जाएँगी ।"

"फिर आप इस क़द्र ग़मगीन क्यों हैं ? खाना भी नहीं खाया आपने ?"

"थक गया हूँ बेटी ! रात भर ठीक से सो भी नहीं सका ।" फिर अचानक ताज्जुब करते हुए बोले, "अरे, तू चाय के साथ यह जाने क्या ले आई ।"

"आप सुबह से भूखे जो हैं," नुसरत ने केतली उठाई और प्याली में चाय उंड़ेलते हुए कहा, "यह सब खाना होगा अब्बाजान ! कहे देती हूँ ।" नुसरत के चेहरे पर ज़रा ख़ुशी की लहर दौड़ गई ।

"तौबा है !" चाय की प्याली हाथ में लेते हुए अब्बाजान मुस्कुरा दिए, "एक ही दिन में अपनी अम्मी की तरह रोब जमाना सीख गई तू ।"

अब्बाजान की बात से नुसरत को हँसी आ गई, लेकिन फिर उसकी पलकें भीग गईं ।

"हँस पगली ! रोती क्यों है ?" कहा तो ऑपरेशन कामयाब हुआ है । अच्छा तू यह कर,ये कुछ इंजेक्शन और दवाइयाँ नर्सिंग होम में दे आ । मैं ज़रा सो लूँ ।" अब्बाजान ने नुसरत की पीठ पर प्यार से हाथ फेरते हुए कहा—"तू अपनी अम्मी को ख़ुद देख आ, मगर देख वहाँ अधिक बातें न करना और न रोना, समझी ।"

"अच्छा अब्बाजान ! "नुसरत बहुत ख़ुश हुई । वह चाहती भी थी कि अम्मीजान को एक नज़र देख ले । वह कई दिन से अपनी प्यारी अम्मीजान को देखने के लिए तरस रही थी । वह आख़िरी बार जब अपनी अम्मीजान को देख कर आई थी तो उस वक़्त अम्मी थीं तो बहुत कमज़ोर, लेकिन उसको दिखाने के लिए बड़ी बहादुर बन गईं थीं, "अरी सुस्त क्यों है ? ऑपरेशन तो यूँ चुटकी बजाते हो जाता है । इसमें तकलीफ़ थोड़ी ही होती है ।" वह कह तो यह रही थीं, लेकिन ऐसा महसूस हो रहा था जैसे अम्मीजान रो पड़ने को हैं । नुसरत को ऐसा ही लगा था, मगर उसने भी ज़ब्त से काम लिया था । रात को जब पड़ोस की मुँह बोली

फूफी उसके पास सोने आईं तो उन्होंने उसकी तारीफ़ की, "नुसरत, तू बड़ी अच्छी बेटी है । अपने माँ-बाप के दुख-दर्द को समझती है ।"

तैयार होकर जब वह अब्बाजान से किराए के पैसे लेने आई तो देखा कि अब्बाजान सोने के लिए दूसरे कमरे में चले गए हैं । उसने बड़ी सावधानी से इंजेक्शन और दवाएँ कुंडियाँ में रखीं, फिर सोचने लगी कि पैसा अब्बाजान से माँगू या उनके कोट की जेब से ख़ुद निकाल लूँ । उसने अब्बाजान को जगाना उचित न समझा । कोट की तरफ़ बढ़ी और उसने जेब में हाथ डाल दिया । लेकिन उसका हाथ जेब से आरपार निकल गया और उसके मुँह से हलकी-सी चीख़ निकल गई ।"

"उई अल्लाह ! कटी हुई है यह तो ।" वह बदहवास होकर सोने के कमरे की तरफ़ भागी । उसे देखकर अब्बाजान ने दूसरी तरफ़ करवट बदल ली । नुसरत पलंग पर बैठ गई उसके पाँव काँप रहे थे ।

"तो आप को मालूम था, अब्बाजान ! आप को कब मालमू हुआ कि जेब कट गई । कितने रुपये थे बैग में, और क्या था जेब में ।" इस तरह सवालों की बौछार करती हुई वह रोने लगी । वह रोने के लिए बहाना भी ढूँढ रही थी । उसे मौक़ा मिल गया ।

अब्बाजान उठ बैठे, "तू रोती क्यों है, क्या रोने से रक़म वापस मिल जाएगी ?"

"तो फिर आप कुछ बताते क्यों नहीं" वह अपनी आँखें मलने लगी ।

"प्यारी बेटी ! मैं तेरे नन्हें से दिल को दुखाना नहीं चाहता था । चोट खाकर थोड़ी देर मैं भी हक्का-बक्का रह गया था । दो हज़ार रुपये थे बेटी । कल ही तो तनख़्वाह ली थी । कल के इन्तिज़ार में ऑपरेशन टल गया था, बेटी ! अब मेरे पास कुछ नहीं रहा । हमारे लिए यह रक़म बहुत बड़ी थी ।"

तो अब क्या होगा अब्बाजान ! नुसरत हुमक कर रह गई । "जो अल्लाह चाहेगा, बेटी ! आज़माइश कह कर नहीं आती, मालिक की मस्लहत इसी में कुछ होगी । मगर तू क्यों रोती है ।"

"मगर अब ख़र्च कैसे चलेगा ? अम्मी की दवाइयाँ कहाँ से आएँगी ? अब्बाजान आप यह मेरी बालियाँ ले जाइए ।"

"क्यों ? पगली ! तू क्यों फ़िक्र करती है, जिसने यह मुसीबत डाली है, वह ख़ुद कुछ करेगा । इंजेक्शन और दवाइयाँ तो मैं ले ही आया । यह दो हज़ार तो मैंने इसलिए बचाए थे कि तेरी रशीदा फूफी को बुलवा लूँगा । रशीदा के साथ दो बच्चे भी हैं । सोचा था कि एक-एक जोड़ा उनके लिए भी बनवा दूँगा । रशीदा आकर घर का इन्तिज़ाम सम्भाल लेती, तेरा पढ़ने का हरज न होता । अब देखिए,

ख़ुदा को क्या मंज़ूर है । अल्लाह के सिवा अब कोई सहारा भी तो नहीं । क़र्ज़ मिल सकता है, मगर मैं क़र्ज़ लेना नहीं चाहता ।"

नुसरत ने एक लम्बी साँस भरी । वह उठी, जाकर अपना छोटा-सा बक्सा खोला । उसमें बीस रुपये मिले । उसने लिए और अब्बाजान को सलाम करके जाने लगी ।

"देखो भिन्नो ! अम्मी से कुछ न कहना," अब्बाजान ने ताकीद की ।

"जी, अच्छा अब्बाजान ।"

रास्ते में न जाने वह क्या सोचती रही । छोटे भाई सईद को उसने रिक्शे पर साथ बिठा लिया था । उसने एक जगह संतरे देखे तो अपनी अपिया की तरफ़ देखने लगा । नुसरत समझ गई । उसने रिक्शा रुकवाया । एक सन्तरा ख़रीद कर सईद को थमा दिया और फिर अपने ख़यालों में खो गई, "अम्मी की बीमारी क्या कम थी कि ऊपर से अब्बाजान पर यह मुसीबत आ पड़ी । अब्बाजान के दिल पर न जाने क्या बीत रही होगी ।" वह इसी तरह सोचती हुई अस्पताल के अहाते में दाख़िल हो गई, रिक्शा रुका । उसने रिक्शा के पैसे दिए और बैग और सईद को साथ लेकर नर्सिंग होम की तरफ़ चल दी ।

अपनी अम्मी का सफ़ेद चेहरा देखकर उसका जी चाहा कि वह चीख़ मार कर रो दे । लेकिन उसने अपने को सम्भाल लिया । अम्मी उस वक़्त सो रही थीं । नन्हीं नुसरत ने बड़ी समझदारी से काम लिया । उसने जगाया नहीं । नर्स को सामान देकर बाहर निकली तो उसकी आँखों से गंगा-यमुना बह रही थीं । सईद ने पूछा—"अपिया तुम रोती क्यों हो ?" उसका जवाब उसने कुछ न दिया, चुपके रिक्शा पर बैठी और घर की तरफ चल दी । रिक्शावाला एक बूढ़ा आदमी था, उसने समझाया, "भिन्नो ! अल्लाह को याद करो । ऑपरेशन से ख़तरा नहीं होता । तुम्हारे घर कोई बड़ा-बूढ़ा नहीं । तुम अकेली क्यों आई ।"

रिक्शावाले से यह सुना तो वह फूट-फूट कर रोने लगी, "घर में अकेले अब्बा हैं । वह रात भर के जागे थे, मैं दवाई लेकर आई थी ।"

"अच्छा, अच्छा ! बड़ी अच्छी बेटी है तू । खाना कौन पकाता है ?" रिक्शावाले ने पूछा ।

"अम्मीजान ।"

"अम्मीजान ! अम्मीजान तो यहाँ हैं भोली भिन्नो !" और अब नुसरत अपने जवाब की ग़लती समझी । उसने बताया कि अब्बाजान फूफीजान को आज ले आएँगे ।

"और बेटी ! तुमने कुछ नहीं सीखा ?" रिक्शेवाले ने सवाल कर दिया और नुसरत के लिए सोचने-समझने का एक नया दरवाज़ा खोल दिया ।

"कुछ-कुछ कर लेती हूँ, मगर मैं बच्चों के स्कूल में पढ़ती हूँ । इम्तिहान के चार महीने बाक़ी हैं," नुसरत कहने को तो कह गई, लेकिन उसके जवाब से रिक्शावाला सन्तुष्ट नहीं हुआ । उसने फिर कहा—

"बेटी ! पढ़ना-लिखना तो फिर हो जाएगा, इस वक़्त तो.....।" फिर न जाने वह क्या सोच कर ख़ामोश हो गया । सामने एक कार आ रही थी । उसने रिक्शा को उससे बचाया और बायीं तरफ़ हो लिया । थोड़ी देर में घर आ गया । नुसरत भाई को लेकर घर आ गई । अब्बाजान सो रहे थे । सईद तो अपनी गेंद लेकर बाहर निकल गया । नुसरत चारपाई पर बैठ कर सोचने लगी— "अब्बाजान हमारी देख-भाल के लिए रशीदा फूफी को बुलाएँगे । फिर फूफीजान के साथ दो बच्चे भी आएँगे । हाँ, मुझे आराम तो मिलेगा, बच्चों में मेरा दिल भी बहलेगा । मगर एक बात यह भी है—उनके दोनों बच्चे बड़े शरारती हैं । वे तो घर को कबाड़ियों की दुकान बना देंगे । हम कुछ बोलेंगे तो फूफीजान को बुरा लगेगा । वह तो एहसान करने आएँगी और यहाँ हम उनके रहमोकरम पर होंगे । यह तो ठीक है कि उनके आने से मेरा स्कूल का हरज न होगा, मगर मेरा दिल तो घर में लगा रहेगा । न जाने जलाल और अकबर किस-किस चीज़ का सत्यानाश कर दें । फिर जब मैं स्कूल से आकर होमवर्क करूँगी तो उनकी चीख़-पुकार में पढ़ ही क्या सकूंगी ।" नुसरत लेट गई । लेटे-लेटे सोचने लगी, "क्यों न अहमदी बुआ को पन्द्रह दिन के लिए अब्बाजान रख लें । उनके साथ बच्चों की कोई पलटन भी नहीं है, आदत की भी अच्छी हैं । मगर उनमें ऐब यह है कि वे मोटी बहुत हैं । चाय बनाएँगी, खाना पकाएँगी तो मुझे ख़ूब नचाएँगी । पढ़ने वे भी न देंगी । ज़रा भिन्नो दियासलाई देना, ज़रा पानी तो ला, वह हण्डिया धो दे और यही कहकर सारा काम मुझ से ले लेंगी, ख़ुद पीढ़ी पर बैठे-बैठे हुक्म चलाएँगी । मगर फिर जब किसी को न बुलाया गया तो घर का क्या बनेगा और मेरी पढ़ाई ? क्या अब्बाजान अपने हाथ से चूल्हा फूंकेंगे ? मालूम तो यही होता है, क्योंकि उनके पास न तो फूफीजान के जोड़ों के लिए रक़म रह गई और न अहमदी बुआ को तनख़्वाह देने के लिए रुपये ही हैं । क्या करेंगे अब्बाजान ?" नुसरत कुछ फ़ैसला न कर सकी ।

उसी वक़्त अब्बाजान खंखारे । नुसरत चारपाई पर उठ बैठी, "अब्बाजान आप नहाएँगे" उसकी ज़बान से अचानक निकल गया । वह झट बावर्चीख़ाने में गई । चूल्हे में लकड़ियाँ लगाईं । लकड़ियों के नीचे कुछ क़ागज़ रखे और दियासलाइयों

पर दिया सलाइयाँ जलाकर आग जलाने लगी । अब्बाजान कमरे से बाहर आ चुके थे, उन्होंने भी मदद की। आग जल गई । वे लोटा लेकर रफ़ए हाजत (शौच) के लिए चले गए । नुसरत का ख़याल था कि अब्बाजान ततेड़ा भर कर चूल्हे पर रख देंगे, मगर शायद उन्हें ख़याल नहीं रहा । अब नुसरत क्या करे । उसने एक तद्बीर की—ख़ाली ततेड़ा चूल्हे पर रख दिया और नल से लोटों में पानी भर-भरकर ततेड़े में उंडेलने लगी । इस तरह उसने ततेड़ा भर दिया । अपनी इस कामयाबी पर वह बहुत ख़ुश हुई ।

उधर पानी गरम हो रहा था । इधर नुसरत ने ग़ुसलख़ाने में तौलिया और साबुन वग़ैरह रख दिया । अब्बाजान वापस आए तो बहुत ख़ुश हुए ।

"ततेड़ा किसने रखा है, बेटी ?" अब्बाजान ने पूछा ।

"मैंने ।"

"तुझ से कैसे उठा यह ?"

नुसरत ने अपनी तद्बीर बताई, तो अब्बाजान ने उसकी पीठ ठोकी, "शाबाश ! बड़ी समझदार और होशियार है, मेरी बेटी !" और फिर उन्होंने ततेड़ा उठा कर ग़ुसलख़ाने में रख दिया । किवाड़ बन्द करके नहाने लगे । नुसरत ने चाय के लिए पानी रख दिया । अब्बाजान के आते-आते उसने चाय तैयार कर ली । जैसे ही अब्बाजान आकर बैठे उसने ट्रे उनके आगे रख दी ।

"सईद कहाँ है ?" अब्बाजान ने पूछा ।

"गेंद लेकर बाहर गया था । अभी तक नहीं आया । बुलाती हूँ ।" नुसरत आवाज़ देनेवाली ही थी कि पानी में लत-पथ सईद घर आया । उसने रोते हुए हमीद की शिकायत की कि उसने भिगो दिया । नुसरत लपकी, उसने उसके कपड़े उतरवाकर नल के नीचे डाल दिए और दूसरे कपड़े पहना दिए । फिर मैले कपड़े ख़ंगाल कर तार पर फैला दिए । अब्बाजान यह सब देख रहे थे । वे चाय पीते रहे और देखते रहे । चाय पीकर बोले—"नुसरत ! तू चाय नहीं पिएगी, क्या ?"

"पी लूँगी, अब्बाजान !" उसने सईद की बूशर्ट तार पर फैलाते हुए कहा और फिर झट अब्बाजान के पास आ गई । सईद को पुकारा, उसे एक बिस्कुट दिया । ताज्जुब है कि उसने दूसरे बिस्कुट के लिए जिद्द नहीं की और जितनी चाय नुसरत ने दी, उतने ही में सब्र कर लिया । इसके बाद नुसरत ने ट्रे उठाई । प्यालियाँ वग़ैरह धोकर धूप में उलटकर रख दीं । उसकी अम्मी का यही तरीक़ा था । फिर वह अब्बाजान के पास आकर कहने लगी—

"अब्बाजान, घर की देख-भाल और काम-काज के लिए किसी को भी नहीं

बुलाया जाएगा । मैं सब कर लूँगी ।"

अब्बाजान को बड़ा आश्चर्य हुआ, "तू कैसे करेगी, तेरी उम्र ही क्या है। तेरी पढ़ाई का क्या होगा, पढ़ने का हरज होगा । घर का धंधा कोई आसान काम नहीं ।" वह देर तक लेकिन-वेकिन करते रहे । लेकिन नुसरत ने अपना फ़ैसला बार-बार दुहराया, तो उन्हें बड़ा सहारा मिला । फिर भी वे ताज्जुब से कहते रहे, "घर का धंधा तेरे बस का नहीं ।"

दूसरे दिन सुबह ही सुबह अब्बाजान को सबूत मिल गया कि नुसरत माँ की तरह तो नहीं, लेकिन जैसे-तैसे एक माह तक घर को सम्भाल ही लेगी ।

वे नमाज़ पढ़कर घर आए ही थे कि नुसरत ने चाय और नाश्ता आगे ला धरा । इसके बाद वह खाना पकाने बैठ गई, उसने सईद को रुमाल में बाँध कर पैसे दिए कि दौड़कर दुकान से आलू ले आए । वह दौड़ा-दौड़ा गया, आलू ले आया । इतनी देर में नुसरत ने आटा गूँध डाला आटा गूँधकर आलू काटे और फिर नौ बजे तक उसने खाना पका लिया । एक नाश्तादान में अब्बाजान को दिया । अब्बाजान बैठे-बैठे अपनी क़मीज़ में बटन लगा रहे थे । उसने झट क़मीज़ छीन ली और बटन लगा दिया । अब्बाजान कपड़े पहनने लगे । उधर उसने अपने नाश्तादान में खाना रखा । सईद को कपड़े पहनाने लगी तो देखा कि उसका पाजामा फटा है । मशीन पर जाकर सी दिया । इसके बाद अब्बाजान अस्पताल गए । नुसरत सईद को लेकर बच्चियों के स्कूल को पैदल चल दी । स्कूल पहुँची तो वहाँ टीचर ने होमवर्क देखना शुरू कर दिया तो नुसरत को पता चला कि होम वर्क तो रह ही गया ।

"यह तुमने आज क्या किया ?" टीचर ने नुसरत को डाँटा । इस डाँट पर नुसरत की आँखों से आँसू जारी हो गए ।

"आपा साहिबा ! मेरी अम्मी बीमार हैं," उसकी ज़बान से निकला । टीचर ने फिर कुछ न कहा । तीसरे घंटे में सईद आप से आप रोने लगा, तो गणित की टीचर ने नुसरत को घूर कर देखा, "इसे क्यों साथ लाई ?" नुसरत ने टीचर के घूरने का कोई ख़याल न किया । वह झपट कर सईद के पास गई । वह उस वक़्त बरामदे में खड़ा था । उसका पेशाब निकल गया था । नुसरत ने पाजामा उतार कर नल से खँगाला और धूप में डाल दिया । सईद फिर खेलने लगा । नुसरत पलटकर कमरे में गई तो गणित का पीरियड ख़त्म हो चुका था । उसने पास बैठी हुई लड़की से पूछा, "कितने सवाल होमवर्क के लिए दिए गए ।" उसने गणित की किताब का पृष्ठ नम्बर बता दिया ।

नुसरत ने स्कूल के काम के साथ सईद को संभाला, टीचर की डाँट सही। वह समझती थी कि यह डाँट दस-बाहर दिन तक रहेगी। फिर अम्मी घर आ जाएँगी। फिर वह कुछ सोच कर प्रिंसिपल साहिबा के पास गई। उनसे घर का सारा कच्चा-चिट्ठा कह सुनाथा। प्रिंसिपल साहिबा ने टीचरों को बताया और सभी टीचर अपनी-अपनी जगह नरम पड़ गईं।

छुट्टी के बाद जब वह घर चली तो खाने-पीने का वह सामान, जो तरकारी और गोश्त से सम्बन्धित था, साथ लेती गई। घर पर उसके अब्बा आ चुके थे। उन्होंने पैदल देखा तो टोका, लेकिन नुसरत ने उन्हें इतमीनान दिला दिया कि स्कूल है ही कितनी दूर। अब्बाजान की आँखों में आँसू आ गए, जिसे वे पी गए।

"बेटी ! तेरी अम्मी आज बहुत अच्छी है।" नुसरत यह सुनकर इतना ख़ुश हुई कि कभी भी इतना ख़ुश न हुई थी। घर में जब उसने बस्ता रखा तो उसे याद आया कि बरतन नल के नीचे जूठे ही पड़े हैं और चूल्हे में राख भरी की भरी है। वह चूल्हे के काम में जुट गई। अब्बाजान ने चाहा कि कुछ हाथ बटाएँ, तो उनसे कह दिया, "अब्बा ! आप अस्पताल फिर एक बार हो आइए।"

"सब ठीक है, बेटी !" अब्बाजान ने इतमीनान दिलाया।

"और अम्मी को फल का रस और दूध वग़ैरह....." उसने बरतन धोते हुए कहा।

"सब हो जाएगा। ला मैं पानी चुल्हे पर रख दूँ। पहले सब चाय पी लें।"

"नहीं, अब्बाजान ! आप ज़रा देर आराम कर लें, मैं कर लूँगी।"

और यह कह कर उसने चाय बनाई। पीते वक़्त सईद मचल गया कि मीठे चावल खाएगा। उसे बहुत समझाया कि इस वक़्त सिर्फ़ चाय ही पीते हैं, मगर वह न माना। उससे वादा किया गया और जब उसे बिस्कुट दिया गया तो माना। चाय पीते-पीते नुसरत ने सोचा, "चलो आज मीठे चावल ही पका लूँ, सुबह की तरकारी रखी है। कुछ रोटियाँ और डाल लूँगी।" उसने देगची में पानी और शक्कर मिला कर उसे चूल्हे पर चढ़ा दिया, फिर चावल धोकर डाल दिए और आटा गूँधने लगी। चावलों में उबाल आया। फिर वे खुदबुद-खुदबुद पकने लगे। उसने कनी देखी तो पूरा का पूरा चावल वैसे का वैसा ही रखा था। नातजुर्बेकार नुसरत ने यह समझा कि पानी कम रह गया। इसलिए चावल नहीं गले। उसने थोड़ा पानी डाल कर ढक दिया। फिर चूल्हे की अंगीठी की तरफ़ देगची करके रोटियाँ पकाने लगी। वह रोटियाँ पका चुकी तो फिर चावल देखे। वे वैसे के वैसे कच्चे थे। अब उसने अब्बाजान को देखा। वे अख़बार पढ़ रहे थे। नुसरत खिड़की से होकर

पड़ोसन के घर गई ।

"मजीदा फूफी चावल तो गले ही नहीं ।"

मजीदा फूफी उसके साथ आईं । देगची का ढकना हटाकर देखा, "अरी तूने कैसे चढ़ाया यह सब ?"

"पानी और शक्कर एक साथ ।" नुसरत ने जवाब दिया, "इसके बाद चावल डाल दिए ।"

"तौबा, क़ियामत तक नहीं पकेंगे ।"

"फिर ?"

"फिर यह कि शक्कर और चावल ला । मैं पका कर दिखा दूँगी ।" मजीदा फूफी ने आधे घंटे ठहरकर मीठे चावल पकाना सिखा दिए । अब्बाजान को मालूम हुआ तो वे मुस्कुराए भी और ग़मग़ीन भी हुए । मजीदा फूफी के जाने के बाद नुसरत ने एक साथ बैठकर खाना खाया, फिर बरतन धोए । इसके बाद राख निकाल कर एक तरफ़ रखी । फिर बिस्तर लगाए और होमवर्क लेकर बैठ गई । अब्बाजान अपने पलंग पर लेटे । उन्होंने करवट दूसरी तरफ़ ले ली, लेकिन वे रो रहे थे । यह बात नुसरत को उस वक़्त मालूम हुई, जब उसने "रब्त-ज़ब्त (मेल-मिलाप)" के मायने पूछे और अब्बाजान ने उधर देखा ।

"हाय अल्लाह ! आप तो रो रहे हैं, अब्बाजान अम्मी कैसी हैं—सच बताइए ।"

"बेटी, वे तो अच्छी हैं । लेकिन तुझे फिरकी की तरह नाचते देखकर मेरा दिल फट आया है ।"

"आप फ़िक्र न करें ।" नुसरत ने कहने को कह तो दिया, लेकिन उसे भी ऐसा लगा जैसे कोई चीज़ दिल से उठकर हलक़ की तरफ़ गई और वहाँ अटक गई । उसने सिर नीचा कर लिया और फिर पढ़ने लगी । सईद रोया तो साथ ही उसे थपकने लगी ।

अब्बाजान को नुसरत उस वक़्त ऐसी अच्छी लग रही थी कि वे उठे । उन्होंने उसके सिर पर हाथ रखा । "अल्लाह तुझे दोनों जहान में कामयाब करे," उन्होंने दुआएँ दीं ।

घर की व्यस्तता, ख़ुदा की पनाह ! अभी भंगन से निबटी तो धोबन से साबक़ा पड़ा; कभी मुहल्ला की कोई औरत कुछ माँगने आई, कभी सईद के कपड़े दुरुस्त किए, कभी अब्बाजान के जूतों पर पॉलिश की । कामों का अंबार था जिसमें सिर खपा रही थी । फिर भी कुछ न कुछ काम बाक़ी रह जाता । "न जाने अम्मी

कैसे कर लेती थीं ?" उसकी ज़बान से निकला । घर के कामों में फँस कर अब उसके पास इतना वक़्त नहीं था कि होमवर्क कर सकती । नतीजा यह हुआ कि आए दिन टीचरों की डाँट पड़ने लगी, "नुसरत ! अब तुम ध्यान नहीं देती हो । अपनी सीट खो दोगी ।"

मगर नुसरत करती तो क्या । उसने होमवर्क का वक़्त इशा के बाद मुक़र्रर किया था, लेकिन इस उम्र की बच्ची, दिन भर की दौड़-धूप के बाद वह इतना थक जाती कि उसे नींद आने लगती और जागने की नीयत के बावजूद वह ऊँघ जाती, फिर बिस्तर पर आप से आप गिरकर सो जाती ।

पूरे पन्द्रह दिन के बाद जब अम्मी घर आईं तो नुसरत दुबली हो चुकी थी और पूछने पर मालूम हुआ कि अपने सिर में तेल उसने तीन ही बार डाला। अम्मीजान को अब भी ज़्यादा बातों की इजाज़त नहीं थी । वह लेटे-लेटे अपनी नन्हीं को बिजली की तरह तड़प कर काम करते देखतीं, तो आँसू बहाने लगतीं । लेटे-लेटे बटन लगाना और ऐसे ही कुछ छोटे काम वह ख़ुद कर देतीं और हिदायत दे-देकर अपने अनुभवों से उसके ज़ेहन को भरने की कोशिश करतीं ।

ख़ुदा-ख़ुदा करके डेढ़ महीने के बाद अम्मीजान ने नहाया । इसके बाद कुछ-कुछ काम वह भी करने लगीं । हालाँकि नुसरत अब भी उनको रोकती और दौड़-दौड़कर काम उनके हाथ से झपट लेती ।

इस तरह अप्रैल का महीना आ गया और स्कूल में परीक्षा की चर्चा होने लगी । बीच अप्रैल से परीक्षा शुरू हुई । नुसरत ने परीक्षा दी । फिर जब रिज़ल्ट सुनाया गया, तो बच्चियों के स्कूल में पहला स्थान प्राप्त करनेवाली नुसरत तीसरा स्थान ही प्राप्त कर पाई । नुसरत रिज़ल्ट सुनकर रोने लगी । वह रोती हुई घर आई और मुँह लपेट कर लेट गई । माँ ने तसल्ली दी, "अरी पगली ! यही बहुत है कि तू पास हो गई । तुझे पढ़ने-लिखने का मौक़ा ही कब मिला ?"

"ऊँ, ऊँ, अम्मीजान ! अब्बाजान ने सालाना इम्तिहान में घड़ी देने का वायदा किया था ।"

"तो क्या हुआ मेहनत करके अगले साल पढ़ना फ़र्स्ट आना और घड़ी ले लेना ।

उसी वक़्त अब्बाजान ख़ुश-ख़ुश घर आए "कहाँ है मेरी अच्छी बेटी नुसरत ?" और यह कहते हुए वह नुसरत की तरफ़ बढ़े । नुसरत उनके गले लगकर रोने लगी, "अब्बाजान मैं थर्ड आई ।"

"कौन कहता है, तू थर्ड पास हुई । तू तो फ़र्स्ट आई ।"

"फ़र्स्ट !" नुसरत अब्बाजान को देखने लगी ।

"हाँ, हाँ फ़र्स्ट ! स्कूल की पढ़ाई इसी लिए तो होती है कि विद्यार्थी एक अच्छा इनसान बने । प्यारी बेटी, तूने माँ की बीमारी में वह काम कर दिखाया है कि दूसरा कर नहीं सकता । तेरी वजह से मेरे सैकड़ों रुपये बच गए । तूने इस छोटी-सी उम्र में बड़ी बूढ़ियों को मात कर दिया ।"

और यह कहते-कहते अब्बाजान ने एक चमचमाती क़ीमती घड़ी अपनी जेब से निकाली और नुसरत की कलाई पर बाँध दी, "बेटी ! स्कूल में तो तू हमेशा फ़र्स्ट आती रही । अल्लाह तआला ने इस साल हमें कैसे बड़े इम्तिहान में डाला । लेकिन तेरी वजह से हम सब कामयाब हुए । तू हम सब में अव्वल रही, यही तो अच्छी बच्चियों की असल कामयाबी है । ख़ुदा तुझको घड़ी मुबारक करे ।"

घर के सभी लोग बहुत ख़ुश हो रहे थे । सईद अपनी अपिया की घड़ी देख रहा था । "अपिया, ज़रा मेरे हाथ में बाँधिए तो, कैसी लगेगी ।"

मुन्ने भाई की कलाई में नुसरत ने घड़ी बाँध दी और बोली, "मेरा मुन्ना भी तो अव्वल रहा । वह ज़िद नहीं करता था, है ना !" और कह कर नुसरत ने सईद के गाल थपथपा दिए ।

......और दरिया में डाल

'अलहम्दु लिल्लाह'[1] मैं अपने शौहर से हमेशा ख़ुशगुमान रही । भूलचूक तो इनसान से हो ही जाती है, वह मेरे शौहर से भी होती, लेकिन वे जल्द ही चौंक जाते और 'अस्तग़फ़िरुल्लाह' पढ़ लिया करते । उनकी अच्छी आदतें मुझे पसन्द थीं । उनकी अच्छी आदतों की वजह से मैं बहुत जल्द उनसे मुहब्बत करने लगी । और यह मुहब्बत दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही चली गई । वे बड़े दीनदार आदमी थे । कुरआन व सुन्नत से जो बात सही समझते वह करते । जो ग़लत होती उससे बचते; हमेशा सच बोलते । उन्होंने मुझ पर हमेशा विश्वास किया । ख़र्च के लिए ढाई हज़ार रुपये महीना दिया करते । इस रक़म के बारे में कभी मुझ से हिसाब नहीं लिया और न मेरी संदूक़ या मेरा बॉक्स ही कभी टटोलने की कोशिश की । उन्हें झूठ, ग़ीबत, चुग़ली और ऐसी ही दूसरी बातों से सख़्त नफ़रत थी । उनमें सबसे बड़ी ख़ूबी यह थी कि वे बड़े दानी और दयालु थे । अल्लाह की राह में ख़ूब देते । अल्लाह का नाम लेकर किसी ने हाथ फैलाया, तो उन्होने दस-बीस रुपये हाथ पर रख दिए ।

बस मैं इस ख़ूबी कि वजह से कभी-कभी उनसे लड़ पड़ती थी । वह भी इसलिए की आजकल ढाई सौ रुपये में चटनी-रोटी तो खाई जा सकती है, लेकिन अगर कोई चाहे कि ज़रा टीम-टाम से ज़िन्दगी गुज़ारे, पर्व-त्योहार और शादी एवं ग़म के मौक़ों पर अरमान निकाले तो उसकी गुंजाइश इस रक़म में नहीं तो ऐसे ही मौक़ों पर मैं "त्रियाहट" कर बैठती । लेकिन वह अपने उसूलों पर इतनी सख़्ती से अमल करते थे कि मुझे हमेशा हार माननी पड़ती । वे मेरी यह दलील भी नहीं सुनते थे कि जब अल्लाह की तरफ़ से आप को हज़ारों की आमदनी है तो आप अपने बाल-बच्चों को क्यों तरसाते हैं । दूसरों को देने में इतने दानी हैं लेकिन जिन पर ख़र्च करना फ़र्ज़ है उन पर ख़र्च नही करते ।

वे मेरी इस बात का जवाब न दे पाते तो मुझे और ज़्यादा बुरा लगता और मैं समझती कि उनमें यह कमज़ोरी है । अपना नाम करने के लिए अपने बाल-बच्चों का पेट काटते हैं । यह बात मैं ही नहीं कहती, मुहल्ला भर के लोग भी कहते थे । सारा शहर यही कहता था, लेकिन उनकी कमज़ोरी की वजह से मैं ज़्यादा

---

1. सारी प्रसंशा अल्लाह के लिए है।

दिनों तक उनसे खिंची न रहती । बस एक-दो दिन अड़ती और फिर झक मारकर काम-धंधों में लग जाती । यह कह कर सब्र कर लेती कि चलो मियाँ में और बहुत-सी ख़ूबियाँ हैं । एक यह ख़ामी ही सही ।

मैं उनकी एक ख़ूबी और बयान करूँ । वे बड़े मज़बूत दिल के आदमी थे । मैंने देखा कि उन पर बुरे दिन भी आए । घर में मौतें भी हुईं । मेरे ससुर, जिन्होंने ऐसे बेटे का पालन-पोषण किया, और जो एक बुज़ुर्ग यानी वली थे । उनका इन्तिक़ाल हुआ, उस वक़्त भी मिया, "इन्ना लिल्लाह," पढ़कर ख़ामोश हो गए थे । आँसू की एक बूंद तक भी मैंने उनकी आँखों में न देखा ।

लेकिन मेरी हैरत की इंतिहा न रही जब सकीना-बी के मरने पर वे रात भर बेचैन रहे । बार-बार "इन्ना लिल्लाह" पढ़ते रहे । मेरे इसरार करने पर भी रात का खाना नहीं खाया । इशा की नमाज़ के बाद जो नफ़्लें पढ़ना शुरू की, तो ग्यारह बजे तक पढ़ते रहे और उन नमाज़ों में सजदे इतने लम्बे किए कि मैं हैरान रह गई । इस हैरानी के साथ उस वक़्त मेरी परेशानी और बढ़ गई जब मैंने सजदों की हालत में उनकी हिचकियाँ सुनीं और सजदागाह को नम देखा ।

मेरी परेशानी का कारण तो मेरी बहनें समझ गईं होंगी, यानी शौहर की परेशानी हर अच्छी बीवी को परेशान कर देती है, लेकिन मेरी हैरत शायद समझ में न आई हो । मैं हैरान यूँ थी कि बी-सकीना लाखों की जायदाद की मालिक होते हुए भी कंजूस, मक्खीचूस थीं । कंजूसी में उनका बड़ा नाम था । घर में कैसा भी अवसर होता कम से कम पैसा उठाने की कोशिश करतीं । अल्लाह की राह में एक पैसा भी उन्होंने कभी नहीं दिया । मदरसा इस्लामिया के लिए चन्दा माँगा गया, साफ़ इनकार कर दिया और कह दिया कि अमानत साहब इस मामले में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लेते हैं, उनके पास जाओ । हाँ भाई ! अमानत साहब के पास तो जाएँगे ही, तुम को जो अल्लाह ने दिया है तो क्या क़ब्र में साथ लेकर जाओगी और फिर क्या हर बात में मेरा शौहर ही रह गया है कि जो बी-साहिबा के पास माँगने गया, ख़ुद तो दामन समेट लिया और दूसरे की तरफ़ भेज दिया । ऐसे मौक़ों पर सच्ची बात यह है कि मुझे बड़ा बुरा लगता ।

सकीना-बी के मरने पर मैं जानती हूँ कि किसी ने भी ग़म का इज़हार नहीं किया । अमानत साहब ने मुझ से कहा कि मैयत में जाओ । मैंने साफ़ इनकार कर दिया, "कौन कंजूस की मैयत में जाए ।"

'रसूल (सल्ल०) की सुन्नत है । मुसलमान को उसके मरने पर बुरा नहीं कहते," मियाँ अमानत साहब ने मेरी बात के जवाब में कहा । फिर भी मैं नहीं गई । उस

दिन के समाचार पत्रों में सकीना-बी की मौत की ख़बर तो आई, लेकिन ऐसे रूखे अन्दाज़ में कि तौबा भली । ज़्यादातर अख़बारों की सुर्ख़ियाँ ये थीं—

"एक कंजूस ख़ातून का इंतिक़ाल जो लाखों की मालिक थीं ।"

लेकिन उसी ख़ातून के मरने से मेरे मियाँ अमानत साहब— सिर्फ़ अमानत साहब— ने ऐसा शोक मनाया कि मैं हैरान और परेशान रह गई । मैंने देखा कि वे रात भर न सो सके । बारह बजे के बाद जब वे यह समझे कि मैं भी सो गई, तो ऊँचे स्वरों में सकीना-बी की मग़फ़िरत के लिए शब्द निकालने लगे, "परवरदिगार ! अपनी इस नेंक बन्दी की मग़फ़िरत फ़रमा ! मैं गवाही देता हूँ कि वह एक बेहतरीन मुसलमान थीं । ऐ अल्लाह ! सैकड़ों औरतें बेवा हो गईं, ऐ अल्लाह ! आज हज़ारों बच्चे यतीम हो गए । ऐ अल्लाह ! इस नेक ख़ातून को बख़्श दे ।"

और फिर जो रोना शुरू किया, तो रोते चले गए । मैं घबरा कर उठ बैठी । झुंझला कर बोली, "बस एक तुम्हीं अल्लाह के बन्दे ऐसे हो जो उस कंजूस का नाम ले रहे हो, ऐसी नेक नीयती भी क्या....."

वे चौंक पड़े, "ज़ैनब ! ऐसी बातें मत करो । मुसलमान मैयत को ऐसा मत कहो, तुमने यह कहकर गुनाह किया ।"

"जी हाँ ! गुनाह किया । सारा शहर गुनाह में डूब गया । आख़िर आप इतने भोले क्यों बनते हैं ।"

"भोला नहीं, सच कहता हूँ ! मेरे पास आओ ।"

मैं झुंझलाई हुई थी । लेकिन शौहर की उदासी पर तरस आ गई । मैं उनके पास गई । कहने लगे, "वह मोटा-सा बड़ा रजिस्टर तो लाओ ।"

"यह रजिस्टर मैंने कभी नहीं देखा था । इशारा पाकर रजिस्टर उठा लाई और फिर.....? तौबा है मेरे अल्लाह !.....उफ़ अल्लाह ! मुझे माफ़ फ़रमा या..... !.....मैं दंग रह गई और अपने गाल पर चांटें लगाने लगी ।

"तो आपने मुझे कभी बताया क्यों नहीं ।"

"ताकीद थी कि न बताऊँ ।"

फिर मैंने ज़्यादा बात नहीं की । कफ़्फ़ारा के तौर पर मैंने दो रकूअत नमाज़ पढ़ी और अब इस प्रतीक्षा में रही कि देखूँ मियाँ क्या करते हैं । फिर मैं भी रात भर न सो सकी ।

मियाँ जल्दी-जल्दी उस रजिस्टर की मदद से कुछ लिखते और एक तरफ़ रखते रहे । एक बजे मुझ से कहा—

"क्या इरफ़ान को जगा सकती हो ?"

"हाँ, क्यों नहीं ! क्या काम है ?"

"अभी 'सुबह सादिक़' अख़बार छप रहा होगा । इरफ़ान से कहो कि मेरा यह बयान प्रेस में दे आए ।"

मैंने इरफ़ान को जगा दिया । एक लेख या ख़बर या बयान जो समझिए, उन्होंने इरफ़ान को दिया और कहा—"बेटा ! जल्द जा और 'सुबह सादिक़' के एडीटर को दे आ । ज़बानी भी कह देना कि नुमायाँ जगह में प्रकाशित कर दें ।"

इरफ़ान साइकिल निकालकर घर से भागा । पन्द्रह-बीस मिनट के बाद लौटा और जवाब दिया कि वह बयान ज़रूर प्रकाशित होगा ।

"अलहम्दुलिल्लाह !" कहकर मुझ से कहा, "अब ज़रा कुछ खिला-पिला दो, कल मेरा रोज़ा होगा ।"

मेरी आँखों में आँसू छलक आए । मैंने झट खाना पेश किया । मियाँ के साथ मैंने भी खाया, दूसरे दिन हमारा रोज़ा था ।

सुबह हुई तो मेरे घर पर शहर के बड़े लोगों का ताँता बँध गया । प्रेस के नुमाइन्दों ने भी मेरे घर को घेर लिया और सब सकीना-बी के हालात दरियाफ़्त कर रहे थे । यह भीड़ देख कर तय किया गया कि आज एक आम सभा की जाए और अमानत साहब इस सभा में अपने इस बयान को तफ्सील से बयान करें ।

वाक़िया यह है कि सुबह को जब अख़बार लोगों के हाथों में पहुँचा तो लोग उसी तरह दंग रह गए जैसे मैं रजिस्टर देख कर हक्का-बक्का रह गई थी । मैंने कहा—"इस वक़्त तो मैं सकीना-बी के घर जा रही हूँ । उनके पोती-पोते और नवासियों को देखूँगी । फिर मैं भी सभा में जाऊँगी । औरतों के बैठने का भी इन्तिज़ाम होगा ?"

ज़रूर होगा, मैं दिन भर जलसे के इन्तिज़ाम में रहूँगा । तुम आ जाना और इरफ़ान, रज़िया, नुसरत और जव्वाद को भी लाना । सब आकर सुनें ।"

"हाँ, सब आएँगे," यह कहकर मैं सकीना-बी के घर चली गई । जब मैं वहाँ पहुँची तो घर छोटे-बड़े घरानों की औरतों से भरा हुआ था । सकीना-बी की पोतियाँ और नवासियाँ ज़्यादा उम्र की न थीं और न घर में कोई बड़ी उम्र का मर्द ही था । इन्तिज़ाम का भार कौन सम्भालता । बेचारी लड़कियाँ बदहवास हो रही थीं । मैंने जाकर इन्तिज़ाम का भार सम्भाल लिया । मैंने देखा सारी औरतें ग़मगीन थीं । मैंने सुना, सारी औरतें कह रहीं थीं कि अमानत मियाँ ने हम सबको बुरे लफ़्ज़

मुँह से निकालने से रोक दिया, वरना हम सब, सकीना-बी को न जाने क्या-क्या कह रहे थे ।

ज़ुहर के बाद मैं सभी औरतों के साथ सभा-स्थल गई । अल्लाहु अकबर ! ऐसी भीड़ किसी अवसर पर कभी न देखी गई होगी । आदमियों का एक जंगल था, जो खड़ा था । वह तो अच्छा ही हुआ कि कई लाउडस्पीकर लगा दिए गए थे । सभा क़ुरआन पाक की तिलावत के साथ आरम्भ हुई । तिलावत के बाद जनाब सैयद अमानत हुसैन साहब अपने बयान का स्पष्टीकरण करने खड़े हुए तो मर्दों और हम औरतों की भीड़ में ऐसा सन्नाटा छाया मानो सब के सिरों पर चिड़ियाँ बैठी हों । सैयद अमानत हुसैन ने हम्दो सना (अल्लाह की प्रशंसा और तारीफ़) के बाद कहा, "भाइयो और बहनो ! मौत आनी है । जो आया है, वह एक न एक दिन अवश्य मरेगा । किसी के मरने पर दुखी होना भी एक स्वाभाविक बात है । इसके सम्बन्ध में मुझे कुछ नहीं कहना है । लेकिन मैं आप सज्जनों का ध्यान नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की उस नसीहत की तरफ़ ले जाऊँगा जिसमें हुज़ूर ने तलक़ीन फ़रमाई है कि मरने के बाद किसी मुसलमान मैयत को बुरा न कहो । एक बार उम्मुलमुमिनीन हज़रत आइशा (रज़ि०) एक औरत के सामने मदीने के सबसे बुरे आदमी के बारे में कुछ कह रहीं थीं । उस औरत ने बताया, "बीबी, आज वह मर गया ।" यह सुनते ही हज़रत आइशा (रज़ि०) ने उस मरनेवाले की मग़फ़िरत के लिए दुआ की । औरत को बड़ी हैरत हुई । पूछने लगी कि जिस व्यक्ति को आप इतना बुरा कह रही थीं । अब उसकी बख़्शिश के लिए दुआ करने लगीं ।" उम्मुलमुमिनीन ने बताया कि नबी करीम (सल्ल०) को मैंने देखा है और उनसे शिक्षा प्राप्त की है— "आप ने मुसलमान मैयत को बुरा कहने से रोका है ।"

तो भाइयो और बहनो ! जब एक बुरे मुसलमान के लिए हमारे दीन में यह रियायतें मौजूद हैं तो नेक मैयत के लिए तो और ज़्यादा सावधान रहने की ज़रूरत है । सकीना-बी मरहूमा की दीनदारी, रोज़ा-नमाज़ की पाबन्दी और दूसरी बातों से तो आप परिचित हैं, लेकिन वे एक बात में बदनाम रहीं । आप सब उन्हें कंजूस कहा करते थे और इस वजह से उनकी दीनदारी भी शक की नज़रों से देखी जाती । लेकिन मैं अर्ज़ करूँ कि आप ने वह हदीस भी सुनी होगी जिसमें है—अल्लाह की राह में ख़र्च और ख़ैरात इस तरह करो कि दाहिने हाथ से दो और बाएँ हाथ को ख़बर न हो । बाख़ुदा मैं सच कहता हूँ— सकीना-बी मरहूमा इस हदीस पर पूरी तरह अमल करती रहीं । आप सब भाई और बहनें मेरे बारे में कहा करते थे कि सैयद अमानत बड़ा दानी है, जो कुछ कमाता है सब ख़ुदा की राह में झोंक

देता है । अपने बच्चों की चिन्ता नहीं करता । बीवी को अच्छा नहीं पहनाता, जबकि हज़ारों की रक़म माँगनेवालों और मुहताजों को बाँटता रहता है ।

मैं अर्ज़ करूँ कि दरअसल यह वह देहाती कहावत के मुताबिक़ है कि "गाँव मेरा नाम तेरा ।" आप पूछेंगे कैसे ? मैं जवाब दूँगा कि यह सब कुछ मुझे सकीना-बी की वजह से ही हासिल था ।

"नारे तकबीर !"....."अल्लाहु अकबर !"

मर्दों के समूह से एक शोर बुलन्द हुआ । औरतें रोने लगीं । हम औरतें तो नर्म दिल की होती ही हैं, मर्द भी रो रहे थे । और तो और वे साहब जो अपने वली बाप के मरने पर भी न रोए, जो अपने जिगर के टुकड़े फ़रमान की मौत पर सिर्फ़ "इन्नालिल्लाह" कह कर रह गए, वे हज़रत भी स्टेज पर खड़े आँसुओं से अपना रुमाल तर कर रहे थे । नवाब मुज़म्मिलुल्लाह ख़ाँ साहब इस सभा की अध्यक्षता कर रहे थे । सुना था कि वे भी बड़े मज़बूत दिल के आदमी हैं, वे भी दोनों हाथों से सिर पकड़े थे । कुहनियाँ मेज़ पर टिकी हुई थीं और आँसू टप-टप गिर रहे थे ।

सैयद अमानत हुसैन साहब फिर कुछ न कह सके । कुछ देर के बाद जब ज़रा तबीयत सम्भली तो मुँशी अमीर अहमद साहब ने शेष बयान पढ़ा । शेष बयान दरअसल रजिस्टर के हिसाबों का खाता था, जिससे मालूम हुआ कि दो सौ बाईस औरतों को मासिक वज़ीफ़े दिए जाते थे । अड़तालीस स्कूलों को प्रतिवर्ष एक लाख रुपये दिए जाते थे । तीन अनाथालयों का भी, जो विभिन्न स्थानों में थे, ख़र्च इतना ही था । इसी तरह और तफ़सीलात थीं । मुँशी अमीर अहमद साहब जब यह विवरण सुना चुके तो सभाध्यक्ष अपने आँसू पोंछ कर उठे । खड़े होकर फ़रमाया—

"अब मैं सभा ख़त्म करने से पहले मरहूमा की वह वसीयत सुनाता हूँ जो मुझे अभी-अभी सैयद अमानत हुसैन साहब ने दी ।" अध्यक्ष साहब ने बताया कि वे तमाम इदारे जहाँ-जहाँ सहायता-राशि प्रदान करती थीं, मरहूमा ने उन सब के लिए उतनी ही रक़म की वसीयत कर दी है और यह देखिए यह वक़्फ़नामा (दान-पत्र) मेरे हाथ में है जिसपर सैयद अमानत हुसैन साहब और मरहूमा की एक बालिग़ पोती आइशा और एक बालिग़ नवासी आमिना के हस्ताक्षर हैं । ये तीनों इस सभा में मौजूद हैं और गवाह हैं । मैं इंशाअल्लाह इस वक़्फ़नामा को कल रजिस्टर्ड करा दूँगा ।"

इस कार्यवाही के बाद अस्र से पहले सभा सम्पन्न कर दी गई । सभा के अन्त में एलान किया गया कि अस्र की नमाज़ यहीं होगी । इसलिए अस्र की नमाज़

उसी मैदान में हुई । मर्दों और औरतों ने नमाज़ के बाद दुआ की और फिर हम सब अपने-अपने घरों की तरफ़ वापस हुए । उस दिन लोगों को मालूम हुआ कि सैयद अमानत हुसैन साहब की दानशीलता किसकी बदौलत थी और लोग किस ग़लतफ़हमी में थे । सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है । साहिबे कमाल और मालिके कमाल अल्लाह तआला ही है, वह जिसे चाहे अपने कमाल का कुछ हिस्सा दे दे ।

शैतान का दरबार

"उफ़ तौबा ! ये शोले फेंकनेवाले तोदे, ये धुआँधार बगोले और यह पहाड़ की भयानक घाटी ! ख़ुदाया मैं कहाँ हूँ और यहाँ कैसे आ गया ?"

मैंने आँखें मलीं । सोचा सपना तो नहीं देख रहा हूँ, मगर नहीं, मैं खुली नज़रों से देख रहा हूँ । धुआँधार बगोले, हरकत करते हुए शोले उगलनेवाले तोदों में समा गए । फिर मैंने देखा जैसे आग की मूर्तियाँ तोदों पर बैठी हों । ऐं ! ये तो जानदार मालूम होते हैं, ये तो आपस में कुछ इशारे कर रहे हैं । एक-दूसरे की तरफ़ देख रहे हैं । ऐ ख़ुदा ! ये कौन सी मख़लूक़ हैं जिन्हें मैं देख रहा हूँ । इनके चेहरे पर धुआँ छाया हुआ है, इनकी आँखें अँगारा बरसा रही हैं । इनके जबड़े भेड़ियों के जबड़ों की तरह हैं। लगता तो यह है कि ये इनसान हैं, मगर ये कैसे इनसान?

एक घबराहट और डर मेरे दिल पर छा गया । अभी मैं किसी नतीजे पर नहीं पहुँचा था कि उन आग के तोदों पर भयावह सूरतवाली जानदार मूर्तियाँ पुकार उठीं—

"या इब्लीस पुरतिब्लीस !"

और फिर अचानक शोर हुआ, "ज़िन्दाबाद !"

"ओह ! ये शैतान हैं," मेरे दिल ने कहा । मैं सोचने लगा कि मैंने तो इब्लीस पुरबित्लीस पढ़ा है । यह पुरतिब्लीस के क्या मायने हैं ? मैं कुछ समझ न सका मेरी नज़रें एक बड़ी पहाड़ी पर टिकी । जिस पर एक बड़ा धुआँधार बगोले से निकलकर एक मुजस्समा (प्रतिमा) हरकत करता हुआ जा बैठा । वह सभी शैतानों से अधिक भयानक और घृणास्पद था । न जाने किस तरह मुझे यक़ीन हो गया कि यही इब्लीस है । मैंने मुअव्विज़तैन पढ़कर अपने ऊपर दम किया और यह देखने की कोशिश करने लगा कि ये सब क्या करनेवाले हैं ?"

इब्लीस पुरतिब्लीस या मेरे शब्दों में तिलबीस ने अपना भारी जबड़ा खोला । धुएँ का एक बगोला उसके मुँह से भभके की तरह निकला, मैंने सुना—

"हाँ, मेरे साथियो ! अपनी कारगुज़ारी बताओ, क्या-क्या काम करके आए हो । आज जिसने सबसे बढ़कर काम अँजाम दिया होगा उसे मैं शैतानों के सबसे बड़े इस महाद्वीप में अपना नायब नियुक्त करूँगा ।"

इब्लीस के इशारे पर एक तरफ़ का एक तोदा (मिट्टी का बहुत बड़ा ढेर) हरकत में आया । मैंने देखा उस ढेर से एक शैतान उतरा । इब्लीस के सामने आकर

सलाम किया और फिर इस तरह अपनी कारगुज़ारी सुनाने लगा—

"बिसमिलइब्लीस पुरतिब्लीस !

यूँ तो आज मैंने बहुत-से इनसानों, जी हाँ ! आदम के बेटों को बहकाया । लेकिन मुझे फ़ख़्र है आज मैंने एक इबादत करनेवाले को उसकी इबादत से हटाकर अत्यन्त अपमान और ज़िल्लत के बहुत ही गहरे खड्ड में गिरा दिया ।

साथियो ! वह आबिद एक जंगल में ख़ुदा की इबादत कर रहा था । अचानक मैं रौशनी बनकर उसके सामने प्रकट हुआ । मैंने रौशनी में से पुकारा, "क़बूल, क़बूल ! ऐ इबादत करनेवाले बन्दे ! तेरी इबादत क़बूल ! अब तू इस मक़ाम को पहुँच चुका है कि मैं तुझ पर से इबादत के सारे अरकान की पाबन्दी ख़त्म करता हूँ । अब तू जो चाहे करे । तुझे जन्नत मिलेगी ।'

हे इब्लीस ! यह सुनकर वह आबिद चौंका और रौशनी की तरफ़ देखने लगा । वह हैरान था कि कौन उसे पुकार रहा है मैं समझ गया । मैंने फिर कहा, "मैं खुले-छिपे भेदों का जाननेवाला हूँ । मैं यह भी जाननेवाला हूँ कि तेरे दिल में क्या है । सुन ! मैं तेरा रब (पालनहार) हूँ और मैं तुझ से ख़ुश हो गया । मेरी कृपा के सिवा तुझे और क्या चाहिए ?"

यह सुनकर उसने सामने रखी हुई किताब उठानी चाही, मैं समझ गया कि यह किताब क़ुरआन है, मैंने सोचा अगर उसने क़ुरआन देख लिया तो मेरा दाव ख़ाली चला जाएगा । इसे जल्द से जल्द अल्लाह के कलाम से ग़ाफ़िल कर देना चाहिए । मैंने पुकारा, "अब क़ुरआन की तिलावत की तुझे ज़रूरत नहीं । दीन के इल्म के सारे ख़जाने मैं तुझे अता करता हूँ । उठ और अब जो चाहे कर, तू जन्नत का हक़दार हो गया ।"

वह सोच में पड़ गया । मैंने उसे सोचने दिया । बोला, "तू मेरा ख़ुदा कैसे हो सकता है । ख़ुदा से सीधे बातचीत करने का सौभाग्य तो सिर्फ़ नबियों को प्राप्त था और नबी (सल्ल०) के बाद अब कोई नबी नहीं हो सकता । मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि या तू कोई जादूगर है या शैतान ।"

उफ़ इब्लीस पुरतिब्लीस ! यह सुनते ही मैं बौखला गया । वह तो ख़ैर हुई उसने 'ला हौल' नहीं पढ़ी । मुझे झट एक दाव सूझ गया और मैंने इसी दाँव से उसको चित्त कर दिया । मैंने ख़िसियानी-सी आवाज़ बनाकर कहा—

"ऐ आबिद ! बेशक तू ख़ुदा के कलाम का आलिम (विद्वान) है । अपने ज्ञान के ज़ोर से बच गया वरना मैं तेरे ईमान को उचक ही चुका था ।"

यह सुनते ही आबिद की पेशानी चमक उठी । ज्ञान के अभिमान से उसकी

गर्दन तन गई और सीना फूल गया ।

वह बोला, "इल्म चीज़ ही ऐसी है कि उसके होते हुए कोई गुमराह नहीं हो सकता ।"

मैं उसके सामने से हट गया । आबिद अत्यन्त प्रसन्न हो गया । बोरिया लपेट कर एक ओर चल दिया ।

मैं पीछे हो लिया । वह अपने शार्गिदों के बीच पहुँचा और डींग मारने लगा—"आज मैं इल्म की बदौलत बच गया वरना शैतान मुझे उचक ले जाता ।" और फिर उसने सारी घटना सब को सुनाई । सब उसकी तारीफ़ करने लगे ।

साथियो ! मेरा ख़याल है कि मैंने उसके अन्दर इल्म का ग़ुरूर भर दिया । मैंने उसे अल्लाह के फ़ज़्ल से ग़ाफ़िल कर दिया और मैं समझता हूँ कि एक इनसान को अल्लाह के फ़ज़्ल से दूर कर देना बहुत बड़ा काम है । यह वह सूक्ष्म बिन्दु है जिसे मैंने बड़ी मेहनत से प्राप्त किया । मुझे उम्मीद है कि मेरा यह काम इस महफ़िल (सभा) में सम्मान के योग्य समझा जाएगा ।

मैंने देखा, जैसे ही यह शैतान चुप हुआ, चारों तरफ़ से उसकी तारीफ़ होने लगी । लेकिन इब्लीस ख़ामोश रहा । उसने दूसरे शैतान की ओर संकेत किया । दूसरा शैतान अपनी जगह से उठा । इब्लीस के सामने गया, सलाम किया और फिर यूँ अपनी रिपोर्ट सुनाने लगा—

"साथियो! आज मैंने सब से बड़ा जो काम किया है उसका संक्षिप्त विवरण आपके सामने प्रस्तुत करता हूँ । आज मेरा गुज़र एक मस्जिद में हुआ । वहाँ एक नौजवान आलिम क़ुरआन का दर्स दे रहा था । मैंने सुना वह कह रहा था—"इस्लाम केवल एक धर्म ही नहीं है, बल्कि सम्पूर्ण जीवन-व्यवस्था है । इस व्यवस्था में जहाँ एक ओर इबादत के सिद्धान्त हैं तो दूसरी ओर देश का शासन चलाने का क़ानून भी है । इस व्यवस्था में एक तरफ़ शादी-ब्याह के तरीक़े बताए गए हैं तो दूसरी तरफ़ लेन-देन के ज़ाब्ते भी । इस व्यवस्था में जन्म से लेकर मृत्यु तक और मस्जिद से मैदाने जंग तक वे सारे तरीक़े मौजूद हैं । इसलिए मात्र रोज़ा-नमाज़ ही कर लेना काफ़ी नहीं है, बल्कि वह सब कुछ अनिवार्य कार्यों में से है जिनका ख़ुदा ने हुक्म दिया है । तो पूरे के पूरे इस्लाम में दाख़िल हो जाओ ।"

नौजवान वास्तव में ज़बरदस्त आलिम मालूम होता था । उसका इल्म नया था । मैंने लोगों पर नज़र डाली । एक तरफ़ बड़ी अच्छी डील-डौलवाला शख़्स बैठा नज़र आया । मैंने उसके कान में फूँका "यह तो कोई मौदूदी मालूम होता है ।"

बस फिर क्या था, उस शख़्स ने बड़े तीखेपन से कहा, "जनाब, आपका

सम्बन्ध किस जमाअत से है ?"

और फिर आप समझ सकते हैं कि मैंने क्या किया होगा। देखते-देखते कुछ लोग एक के तरफ़दार हो गए और कुछ दूसरे के और फिर वह हंगामा बरपा हुआ कि मेरी ज़रूरत ही नहीं पड़ी। वह नौजवान आलिम साहब अपना-सा मुँह लेकर रह गए।

हे इब्लीस ! मैं समझता हूँ कि इस तरह की महफ़िल को दरहम-बरहम कर देना, उस दीन को ढाहना है जिस पर आदम के बेटों को बड़ा नाज़ है। उम्मीद है कि मेरा यह काम पसन्द किया जाएगा।

इस शैतान के ख़ामोश होने पर भी चारों तरफ़ से तारीफ़ के अँगारे बरसाए जाने लगे। लेकिन इब्लीस उसी तरह चुप बैठा रहा जिस तरह बैठा था। उसने एक और शैतान की तरफ़ संकेत किया। उसने भी प्रारम्भिक शब्दों के बाद इस तरह कहना शुरू किया—

साथियो ! आज मैंने बाज़ार जाकर देखा कुछ लोग चन्दा वसूल रहे थे। मैंने एक व्यक्ति से पूछा कि यह किसके लिए चंदा हो रहा है ? बताया कि गाँव में आग लग गई है। दस-बारह घर जलकर राख हो गए हैं। वहीं के बेघर लोगों की मदद के लिए रक़म वसूल की जा रही है।

यह सुनकर मैं आगे बढ़ गया। हाजी एण्ड कम्पनी में पहुँचा। अपने को व्यापारी बता कर हाजी साहब से बातें करने लगा। बातों-बातों में मैंने यह समझ लिया कि हाजी साहब अपनी जेब से हज़ारों रुपये निकाल चुके हैं। मैंने हाजी साहब को समझाया कि आप ज़कात तो निकालते ही होंगे, उसमें से कुछ दे दीजिए। यह रुपया असल का बच जाएगा।

हाजी साहब को मेरी यह बात पसन्द आ गई। उन्होंने नोटों की गड्डी सन्दूक़ची में डाल दी और अपने मुनीम से कहा कि ज़कात में से दो हज़ार दे देना। और यह कह कर वे ज़ुहर की नमाज़ पढ़ने चले गए।

तीसरे शैतान के चुप होने पर भी शाबाशी के नारे बुलन्द हुए। मैंने अपने दिल में कहा, "ऐ ख़ुदा ! इन शैतानों को कैसे-कैसे बारीक नुकते मालूम हैं, जिनके ज़रिए वे इनसान को एक बड़े सवाब से वंचित कर देते हैं और इनसान इन के धोखे में आ जाता है। फिर मैंने और बहुत कुछ देखा-सुना। इब्लीस के इशारे पर एक-एक शैतान आता और अपनी-अपनी कारगुज़ारी सुनाता। शैतानों से दाद हासिल करता और अपनी जगह जा बैठता।

मैं सोच रहा था कि देखना है इब्लीस को किस की शैतानियत पसन्द आती

है । सबके बाद एक ठिगना शैतान इब्लीस के सामने आया । उसने अधिक विस्तार से काम नहीं लिया । आते ही बोला, "आज मैंने एक मर्द को उसकी बीवी से लड़ा दिया, यहाँ तक कि मर्द ने बीवी को घर से निकाल दिया.....।"

यह ठिगना शैतान इतना ही कह सका था कि इब्लीस पुकार उठा, "वाह ! तूने वह काम किया जो वास्तव में शैतानों के करने का है । अच्छा, हाँ, बता किस तरह लड़ा दिया तूने दोनों को ।"

ठिगना शैतान बताने लगा—कुछ ज़्यादा उपाय नहीं करना पड़ा । मैंने एक तावीज़ कच्चे धागे में बाँधकर मुख्य दरवाज़े के बाज़ू से बाँध दिया और एक तरफ़ हो गया । थोड़ी देर के बाद मकान-मालिक आया । उसने वह तावीज़ देखा तो पकड़कर खींच लिया । तावीज़ को खोला तावीज़ का नक़्शा इस तरह था :

ग़ा	T	फ़ि	म
T	T	या अज़ाज़ील	शेरा
फ़ि	ताज़न	फ़ि	अज़ ग़ौस
म	वजदमा	वपाइद	म

वह देर तक यह तावीज़ देखता रहा । उसे चिंतित देखकर मैं उसके पास गया । मैंने उसे सलाम किया । उसने मुझे देखकर तावीज़ का नक़्शा छिपा लिया । मैंने कहा, "छिपाने से क्या फ़ायदा ? घर की ख़बर लीजिए ?"

और यह कहकर मैं वहाँ से हट गया, लेकिन इस टोह में रहा कि देखूं घर में क्या होता है । मकान मालिक घर गया और जाते ही उसने बीवी से पूछा, "ग़ौस को जानती हो ?" बीवी ने जवाब दिया, "वह मेरा ममेरा भाई, वही तो ?"

"जी हाँ, वही । तो तशरीफ़ ले जाइए । दुआ-तावीज़ होने लगे कि मैं ग़ाफ़िल हो जाऊँ ।" और इसके बाद, उस ख़ुद्दार मर्द ने इतने अपशब्द सुनाए कि तोबा भली । बीवी ने लाख-लाख क़स्में खाईं लेकिन मर्द ने झोंटे पकड़ कर उसे घर से निकाल दिया ।

"या इब्लीस ! मैं समझता हूँ कि मैंने थोड़ी मेहनत करके एक बड़ा काम अंजाम दिया ।"

"यह तो कोई काम न हुआ । यह तो हर घर में होता ही है, सारे शैतानों ने कहा, लेकिन इब्लीस इस ठिगने शैतान की शैतानियत से इतना ख़ुश हुआ कि

उसने बढ़कर उसे गले लगा लिया । फिर बोला, "एक मर्द को उसकी बीवी से लड़ा देने के मायने यह हैं कि इनसानों के समाज की जड़ काट दी गई । अगर तुम सब यही एक काम कर जाओ तो इनसान पर वह बड़ी विजय होगी जिसे दुनिया भुला न सकेगी । और फिर इस में वह फ़ितना और बिगाड़ पैदा होगा कि जिसका रोकना इनसान के बस का काम नहीं होगा ।"

यह कहकर इब्लीस ने उस ठिगने शैतान को अपना नायब बना दिया । मैं आश्चर्यचकित रह गया । मेरी आँखें खुली-की-खुली रह गईं । फिर मैंने देखना चाहा लेकिन वे सब नज़रों से ओझल हो चुके थे । मैं आँखें खोले अपने बिस्तर पर लेटा रहा । अच्छा तो मैंने ख़्वाब देखा है, 'अस्तग़फ़िरुल्लाह' । और फिर मैं अपने मुहल्ले के जुम्मन ख़ान को याद करके अफ़सोस करने लगा । उस बेवक़ूफ़ ने ज़रा-से शक पर बीवी को तलाक़ दे दी थी और फिर ख़ुद भी तबाह हो गया और उसके बाल-बच्चे भी ।

"ला हौ-ल व ला क़ुव्व-त इल्ला बिल्लाह"

(कोई ताक़त और तदबीर अल्लाह के बग़ैर नहीं।)

वर्षों के बाद

"लेकिन ऐ क़ैसर ! यह तो आपकी एक अक़्ली दलील है । ज़रूरी नहीं कि अक़्ली दलील पर कोई व्यक्ति अपना दीन-धर्म बदल दे जबकि हम देखते हैं कि हमारी अक़्ल छोटी है," हकीम सदूक़ी ने चिल्लाकर कहा ।

"मगर तुम जैसे समझदार आदमी के पास इस अक़्ली दलील का कोई तोड़ नहीं," रोम के क़ैसर थियोडोसियस (Theodosius) ने कहना शुरू किया, "क्यों हकीम ! क्या वह ख़ुदा जिसने एक बार दुनिया को पैदा कर दिया, उसके लिए मुश्किल है कि दोबारा सम्पूर्ण विश्व को फिर बनाए ।"

"ख़ुदा के लिए मुश्किल नहीं है ।"

"अच्छा, तुम ने यह स्वीकार कर लिया । यह बताओ कि एक व्यक्ति ने सत्तर ख़ून किए, उसने न जाने कितनी औरतों को बेवा किया और न जाने कितने रिश्तेदारों को पीड़ित किया. न जाने कितने बच्चों को यतीम किया तो क्या तुम इस नुक़सान का अन्दाज़ा लगा सकते हो ?"

"नहीं, ऐ शहंशाह !"

इसके बाद वह शख़्स गिरफ़्तार हुआ और मैंने उसे फाँसी पर लटका दिया तो क्या उसके कर्मों की उसे पूरी-पूरी सज़ा मिल गई ? उसे पूरा-पूरा बदला मिल गया ?"

"नहीं !"

"तो फिर ज़रूरत है कि एक ऐसा दिन आए जब पूरा-पूरा इनसाफ़ किया जा सके और कोई पूरे-पूरे नुक़सान का अन्दाज़ा करके पूरी-पूरी सज़ा दे सके । बोलो, ज़रूरत है ऐसे दिन की ?"

"....................."

"हकीम ! तुम चुप क्यों हो । जवाब दो ।"

"हुज़ूर ! ज़रूरी नहीं कि हर बात का जवाब दिया ही जाए । हुज़ूर को ख़ुदा ने बहस की वह क़ाबलियत दी है कि बड़े-बड़े विद्वान आप के सामने घुटने टेकने पर मजबूर हैं । अगर कल ख़ुदा किसी ऐसे धुरन्धर विद्वान को पैदा कर दे जो बहस में आप की ज़बान बन्द कर दे तो...... ?"

"तो....... ! आख़िर तुम कहना क्या चाहते हो ?"

"मेरी अर्ज़ वही है कि आज तक किसी व्यक्ति ने भी आँखों देखी यह दलील नहीं दी कि मरने के बाद भी कोई ज़िन्दा हो सकता है ।"

"तो क्या ख़याल है तुम्हारा, यदि एक व्यक्ति आकर यह संदेश दे कि मैंने चीन (देश) देखा है तो तुम झुठला दोगे ।"

"क्या मालूम वह अपना रौब क़ायम करने के लिए यह झूठ बोल रहा हो ।"

"लेकिन अगर वह कभी झूठ न बोला हो और इस झूठ से उसका कोई लाभ न हो, तो ?"

"हुज़ूर ! मैं समझ रहा हूँ कि आप फिर मेरा उसी व्यक्ति की तरफ़ ध्यान आकर्षित कर रहे हैं जिसे आप नबी मानते हैं । मैं तो यह कह चुका कि जो हज़रत ईसा को नबी मानता हो, उसे आप की बात अवश्य मान लेनी चाहिए । लेकिन मेरे जैसा व्यक्ति जो यह कहता है कि जब तक कोई स्पष्ट प्रमाण न होगा वह आप के परलोक के विश्वास को कैसे मान लेगा । देखिए, मैं आप को याद दिला दूँ कि आप वचन दे चुके हैं कि आप मुझे क़त्ल न करेंगे । आप ने यह वायदा करने के बाद बहस छेड़ी है कि 'दीन' (धर्म) में किसी तरह की ज़बरदस्ती नहीं है । आप मेरे सामने स्पष्ट प्रमाण पेश करें । मेरा सवाल फिर सुन लीजिए— 'आज तक कभी नहीं देखा गया, न कहीं सुना गया कि कोई मरकर फिर ज़िन्दा हो सकता है । इतिहास में कोई सबूत नहीं मिलता कि मरने के महीने दो महीने के अन्दर जिस्म सड़ जाने के बाद फिर किसी को ज़िन्दगी मिल सकी हो ? अल्लाह ने जिसे बहस करने की ताक़त दी है, वह दूसरे की ज़बान तो बन्द कर सकता है लेकिन दिल में यक़ीन नहीं पैदा कर सकता । मुझे दिल का यक़ीन चाहिए ।"

शहंशाह थियोडोसियस (Theodosius) जो 445 ई० में रोम का प्रसिद्ध शासक गुज़रा है, हकीम के इस तर्क से चिन्तित हो गया । वह हज़रत ईसा की शिक्षाओं पर पूरी तरह ईमान ला चुका था । वह अपनी सारी क़ौम और प्रजा से तौहीद (एकेश्वरवाद), रिसालत (ईशदूतत्व) और आख़िरत (परलोक) के अक़ीदे को मनवा चुका था । अल्लाह तआला ने उसे ऐसी समझ दी थी कि वह हरेक को पूरी तरह सन्तुष्ट कर देता था मगर हकीम सदूक़ी को वह सन्तुष्ट न कर सका । वह सोच में पड़ गया कि कहीं ऐसा न हो हकीम के सन्तुष्ट न होने पर क़ौम और प्रजा फिर अपने पुराने धर्म की ओर पलट जाए । क़ैसर के पास अब इसके सिवा कोई चारा न रहा कि वह ख़ुदा से मदद माँगता । इसलिए उसने दिल ही दिल में ख़ुदा से दुआ की । अचानक दरबार के बाहर आवाज़ गूँजी, "मुबरम, मुबरम वालामरम या क़ैसर !"

और साथ ही दरबान ने हाज़िर होकर अर्ज़ किया, "लोग एक नौजवान को चोरी के जुर्म में पकड़ कर लाए हैं। उनका कहना है कि उसके पास से कई सौ वर्ष पहले का सिक्का बरामद हुआ है।"

"उसे हाज़िर करो !" क़ैसर थियोडोसियस ने हकीम से बहस का सिलसिला रोक दिया। अब वह एक न्यायाधीश था। मुजरिम और कोतवाल दोनों उसके सामने पेश हुए। मुकद्दमा इस तरह आरम्भ हुआ—

कोतवाल : हुज़ूर ! इस नौजवान के पास से यह सिक्का बरामद हुआ है। सैकड़ों आदमी गवाह हैं।

क़ैसर : (सिक्का देखते हुए) क्यों नौजवान ! यह सिक्का तुम्हारे पास था ?

नौजवान : जी, यह सिक्का मेरा है और यह मेरा माल है। मेरे पास ऐसे ही सिक्के और हैं।

क़ैसर : दिखाओ !

नौजवान : (दूसरा सिक्का पेश करते हुए) यह लीजिए। मैंने चोरी नहीं की और न ही मुझे गड़ा हुआ धन मिला है।

क़ैसर : तुम पर कभी पागलपन तो सवार नहीं हुआ।

नौजवान : ख़ुदा का शुक्र है कि मैं न कभी पागल था और न आज हूँ। मैं पूरे होश और शऊर के साथ अपना बयान दे रहा हूँ।

क़ैसर : मगर यह सिक्का साबित कर रहा है कि तुमको कई सौ साल पहले का गड़ा ख़ज़ाना हाथ लग गया है और तुम जानते हो कि हर गड़ा ख़ज़ाना सरकारी होता है। ज़्यादा से ज़्यादा तुम्हें ख़म्स (पाँचवाँ हिस्सा) मिल जाता, लेकिन तुमने छुपाया इसलिए तुम मुजरिम हो।

नौजवान : मैं मुज़रिम कैसे हो सकता हूँ। मैंने भरे बाज़ार में बावर्ची को पूरे इतमीनान से यह सिक्का दिया है। अगर मुझे छिपाना होता तो मुझे उसे गला डालना चाहिए था ?

क़ैसर : तुम बड़े निडर नौजवान मालूम होते हो लेकिन तुम यह भूलते हो कि इस सिक्के पर कई सौ साल पुराना ठप्पा है।

नौजवान : (बौखला कर) कई सौ वर्ष, कई सौ वर्ष। अल्लाह की क़सम ! मैं और मेरे दोस्त तो परसों यहाँ से गए हैं।

क़ैसर : तुम क्या करते हो, परसों जाने के क्या मतलब है ?

नौजवान : "..............."

क़ैसर : तुम्हारी ख़ामोशी और तुम्हारा भयभीत चेहरा इस बात की दलील है कि तुम चोर हो ।

नौजवान : मैं चोर नहीं हूँ । मैं इस सिक्के की वजह से नहीं डर रहा हूँ ।

क़ैसर : फिर जवाब दो । तुम्हारे साथ इनसाफ़ किया जाएगा ।

नौजवान : (झुंझलाकर) अगर हुज़ूर ने इनसाफ़ किया होता तो हम सातों दोस्त क्यों अपनी जान बचाकर भागते ।

क़ैसर : (कोतवाल से) इस नौजवान की पिछली रिपोर्ट तुम्हारे पास है ?

कोतवाल : मुझे इसकी बिलकुल जानकारी नहीं है ।

क़ैसर : (नौजवान से) परसों तुम क्यों भाग गए थे :?

नौजवान : (चारों तरफ़ हैरान व परेशान होकर देखता है)

क़ैसर : तुम परेशान न हो । अपना बयान दो, तुम पर ज़ुल्म नहीं होगा ।

नौजवान : अगर आप मेरी ज्ञान बख़्शी फ़रमाएँ और कहने दें तो अर्ज़ करूँ ।

क़ैसर : मैं ख़ुदाए वाहिद और हज़रत ईसा (अलै०) का नाम लेकर वादा करता हूँ कि तुमको क़त्ल नहीं करूँगा ।

नौजवान : ऐ अल्लाह ! ऐ अल्लाह ! ईसा, ईसा—ऐ ख़ुदा ! मैं क्या सुन रहा हूँ । एक दिन में यह क्या हो गया । परवरदिगार तेरे बस में सब कुछ है ।

क़ैसर : नौजवान ! तुम पर यह हैरानी की कैफ़ियत क्यों छाई हुई है ? अपना बयान दो ।

नौजवान : तो क्या यह सही है कि आपने ख़ुदा को एक मान लिया है और हज़रत ईसा (अलै०) को नबी मान लिया है ।

क़ैसर : बेशक ! मेरा यही ईमान है ।

नौजवान : "अलहम्दुलिल्लाह ! यही मेरा वह जुर्म था जिसकी वजह से हम सातों दोस्त परसों यहाँ से भाग गए थे । यह कोतवाल साहब जो आज कहते हैं कि हम से अपरिचित हैं, इनके जासूस हमारी तलाश में थे, लेकिन हमारे ख़ुदा ने हमें सुरक्षित जगह पहुँचा दिया ।

क़ैसर, हकीम सदूक़ी और सारे दरबारी हैरान थे कि यह कैसा नौजवान है और कौन है और कैसी बातें कर रहा है । सभी लोग अत्यन्त दिलचस्पी और अत्यन्त

ध्यानपूर्वक मुक़दमे की सारी बातें सुनने लगे ।

क़ैसर : (नौजवान से) तुम अपनी पूरी कहानी सुनाओ वरना जुर्म क़बूल करो ।

नौजवान : अब मुझे क्या भय हो सकता है । अब तो मैं अपना पूरा परिचय करा सकता हूँ ।

सुनिए ! मेरा नाम यमलीख़ा है । मैं सदरूस का बेटा हूँ और ख़ुदरैस मुहल्ला का रहनेवाला हूँ । आप मेरे बाप को बुलाकर छानबीन कर सकते हैं कि मैं चोर नहीं हूँ । आप मेरे मुहल्लेवालों से पूछ सकते हैं कि मैंने कभी चोरी नहीं की । मैंने जो सिक्का पेश किया है, यह वही सिक्का है जो मैं परसों लेकर गया था । एक दिन के अन्दर आपने इन सिक्कों को नाजायज़ क़रार दे दिया । आप ने बहुत अच्छा किया । जब एक दिन में आप का ईमान, आप का यक़ीन, आपका दीन बदला तो सिक्का भी बदल जाना चाहिए ।

आप मेरी बातों पर ताज्जुब में क्यों हैं । आप ही के हुक्म से कोतवाल हमारे पीछे लगा था कि यमलीख़ा और उसके दोस्तों को पकड़ लाओ । जुर्म यही था जो आज आप का ईमान बन चुका है । मैंने इन सारे हाथ के बनाए हुए ख़ुदाओं और अपनी जगह पर तागूत (ख़ुदा के मुक़ाबले में अपना क़ानून चलानेवाले) बनकर बैठनेवालों की ख़ुदाई से इनकार कर दिया था । मैंने हज़रत ईसा (अलै०) की नुबूव्वत की गवाही दी थी, परसों । बस यही मेरा जुर्म है कि आप नाराज़ हो गए । आप तो ख़ुद ख़ुदाई का दावा कर रहे थे । ख़ुदा का शुक्र है कि आज आप मुसलमान हैं ।

ऐ शहंशाह ! मैंने और मेरे नौजवान दोस्तों ने खुल्लम-खुल्ला यह एलान किया था कि हमारा रब क़ैसर थियोडोसियस (यानी आप) नहीं, बल्कि वह है, जो आसमानों और ज़मीन का रब है । (क़ैसर थियोडोसियस का नाम लिया गया तो शहंशाह थियोडोसियस और दरबारियों को और भी विस्मय हुआ) हमने आप को रब स्वीकार नहीं किया तो आप ने हमें गिरफ़्तार करने का आदेश दिया । अल्लाह का शुक्र है कि उसने हमारे दिलों को मज़बूत कर दिया । जब हम सातों ने आप का आदेश सुना तो हम ने तय कर लिया—कुछ भी हो हम अल्लाह तआला को छोड़कर किसी दूसरे को पूज्य न बनाएँगे । अगर हम ऐसा करें तो बहुत अनुचित बात होगी । फिर हमने आपस में मशविरा किया कि हमारी क़ौम तो अल्लाह, विश्व के पालनहार को छोड़ चुकी है और उसके पास कोई मज़बूत दलील भी नहीं है ।

ऐ शहंशाह ! हमने ज़रा जल्दी की । अगर हम एक दिन और सब्र करते

तो आप का मुसलमान होना देखते । हम अपनी ग़लती के लिए अपने रब से माफ़ी माँगते हैं । हमने मशविरा करके फ़रार होने का रास्ता अपनाया । एक गुफा में जा छिपे । अल्लाह को रोज़ी देनेवाला हम मान चुके थे । हमें विश्वास था अल्लाह हमें रोज़ी देगा ।

ऐ बादशाह ! जिस वक़्त हमने यह एलान किया और भागे जा रहे थे तो रास्ते में हमें एक वफ़ादार कुत्ता मिला । वह हमारे पीछे चला । हमें खटका पैदा हुआ कि अगर यह साथ रहा तो हमारा भेद खुल कर रहेगा । हमने उसे ढेले मारे, उसे बहुत भगाया लेकिन वह पीछे लगा रहा । हैरत यह थी कि वह भौंकता न था । हमें उसकी हालत पर रहम आ गया । हमने उसे साथ ले लिया और गुफा में जा छुपे । वफ़ादार कुत्ता गुफा के मुँह पर अगली टाँगे फैलाकर सो रहा, गोया उसने बताया कि पहले उसे कोई क़त्ल कर दे फिर सात दोस्तों तक पहुँचे ।

(नौजवान ने चारों तरफ़ देखते हुए हकीम सदूक़ी की तरफ़ उँगली उठाई ।) हुज़ूर ! इस दरबार में देखता हूँ कि यह बुज़ुर्ग सबसे ज़्यादा समझदार मालूम होते हैं । यह मेरी इस बात की सच्चाई की ताईद करेंगे कि एक जानवर ने हमारी मदद की । अफ़सोस है इनसानों पर कि उन्होंने ईसा (अलै०) को नबी नहीं माना ।

(इन नौजवान ने यह कहा तो हकीम सदूक़ी घबरा गया और सारा दरबार मुस्कुराने लगा) ।

इसके बाद हम दूसरे दिन जागे तो आपस में कहने लगे कि भला कितनी देर सोए होंगे ? फिर ख़ुद ही कहने लगे कि शायद दिन भर या इससे कुछ कम ही सोए होंगे । फिर हमने ख़ुद ही कहा कि हमारा अल्लाह बेहतर जानता है कि हमारा कितना वक़्त इस हालत में गुज़रा । फिर हमें भूख लगी । आपस में राय-मशविरा यह हुआ कि हम आपस में से किसी को चाँदी का यह सिक्का दे कर शहर भेजें और वहाँ जाकर देखें कि सबसे अच्छा खाना कहाँ मिलता है ।

मैं आप से यह भी अर्ज़ करूँ कि सातों साथी खाते-पीते ख़ानदान से सम्बन्ध रखते हैं । सलीख़ा जो हममें सबसे बड़ा है, वह आप के मुसाहिब कैमूस का लड़का है । आप कैमूस से पूछ लें कि मैं झूठ नहीं कहता और कैमूस की कुर्सी आप के दरबार में— वह है ।

(नौजवान ने मुड़कर एक कुर्सी की तरफ़ इशारा किया लेकिन वह हक्का-बक्का रह गया और बोला— ताज्जुब है, आज कैमूस की कुर्सी पर दूसरा व्यक्ति बैठा है !)

हुज़ूर ! मालूम होता है कि कैमूस क़त्ल कर दिया गया क्योंकि वह छिपे तौर पर हमारा हमदर्द था । काश ! एक दिन और उसे ज़िन्दगी मिल गई होती । ख़ैर, आगे हमारा हाल यह है कि मुझे चुना गया कि मैं बाज़ार जाकर खाना लाऊँ । मैंने चाँदी के सिक्के जेब में डाले और किसी से बात किए बिना होटल पहुँचा । मुझे यह देखकर हैरत है कि एक दिन में शहर की काया-पलट हो गई । आज यह शहर वह शहर ही नहीं जो परसों था । समझ में नही आता कि एक दिन में यह कैसे क्या हो गया । शायद कोई अलौकिक वस्तु आपने देखा, इसी लिए आप हज़रत ईसा (अलै०) पर ईमान लाए, वरना दलीलों से तो कोई माननेवाला नहीं । वास्तव में इनसान उलटी समझवाला पैदा हुआ है । ख़ैर, मेरे साथियों ने मुझ से कह दिया था कि बड़ी होशियारी से जाना । अगर पहचान लिए गए तो हमारी ख़ैर नहीं । हम सभी पत्थरों से संगसार कर दिए जाएँगे या फिर यह होगा कि हमें पकड़कर फिर उस दीन और धर्म की तरफ़ लाने पर मजबूर किया जाएगा जिसे असत्य समझकर छोड़ दिया है ।

मैं बड़ी होशियारी से शहर आया । मैंने जैसे ही सिक्का होटलवाले को दिया, उसने शोर मचा दिया । कोतवाल साहब आ पहुँचे । मुझे गिरफ़्तार कर लिया गया । मुझे उम्मीद है कि अब जबकि आप ख़ुद हज़रत ईसा (अलै०) को नबी स्वीकार कर चुके हैं, आप हमारे साथियों का सम्मान करेंगे । आप मुझे हुक्म दें तो मैं अपने साथियों और दोस्तों को जाकर यह ख़ुशख़बरी सुनाऊँ और यहाँ ले आऊँ ।

नौजवान अपना बयान देकर ख़ामोश हो गया । क़ैसर थियोडोसियस और दरबारी सब हैरान थे कि नौजवान यह क्या बातें कर रहा है । बादशाह ने पूछा, "नौजवान तुम अपना मुहल्ला, अपना मकान और अपने खानदानवालों को पहचान लोगे ?"

"क्यों नहीं ?"

और फिर क़ैसर सभी दरबारियों और हकीम सदूक़ी के साथ उठ खड़ा हुआ । आगे-आगे नौजवान एक तरफ़ बढ़ा चला जा रहा था । वह रास्ता और इमारतों को देखकर चकित हो रहा था । बार-बार कह रहा था, "ऐ ख़ुदा ! एक दिन में यह कैसी चमत्कारिक घटना घट गई कि शहर की हर चीज़ बदल गई ।" वह चलते-चलते एक आलीशान महल के पास खड़ा हो गया । उस महल की बुनियाद पुराने पत्थरों की थी ।

"इस जगह था मेरा मकान, मगर यह महल न था । मैंने बुनियाद (नींव) के पत्थरों से यह पहचाना ।" नौजवान ने घर का पता बता दिया । बादशाह और दरबारियों को देखकर मुहल्लेवाले जमा हो गए । मकान-मालिक भी घबरा कर बाहर निकल आया । एक अजनबी नौजवान को देखकर सब हैरान थे कि मामला

क्या है । बादशाह के आदेश से मकान के सारे लोग— बच्चे, बूढ़े, जवान, मर्द और औरतें सब उस नौजवान के सामने लाए गए और नौजवान हर एक को देखकर कहता रहा कि मैं इसे नहीं पहचानता । घर के एक बूढ़े व्यक्ति ने डरते-डरते बादशाह से पूछा कि यह माजरा क्या है । हमारे घर के लोगों की जाँच-पड़ताल क्यों हो रही है । हम यक़ीन दिलाते हैं कि हम सच्चे और शरीफ़ नागरिक हैं और हमने कभी कोई जुर्म नहीं किया है ।

नौजवान ख़ामोश खड़ा था । अब उसे डर लगने लगा कि वह अपना परिचय ठीक-ठीक न करा सका तो वह ज़रूर क़त्ल कर दिया जाएगा । बादशाह ने भाँप लिया । उसने कहा, "नौजवान ! डरो नहीं, तुमने अपने बाप का नाम क्या बताया था ?"

"सदरूस !"

बादशाह ने उस बूढ़े से पूछा—"तुम इस नाम से परिचित हो ?"

बूढ़ा : हुज़ूर ! सदरूस मेरे परदादा का नाम था ।

क़ैसर : तुम्हारे परदादा को गुज़रे कितने साल हुए ?

बूढ़ा : लगभग कई सौ साल ।

क़ैसर : तुम्हारे पास वंशतालिका है ?

बूढ़ा : जी हुज़ूर ! हम वंशतालिका की हिफ़ाज़त करनेवाले हैं ।

क़ैसर : तुमने अपने दादा को देखा है ?

बूढ़ा : जी, देखा है । मैं नौजवान था जब वे अल्लाह को प्यारे हो गए थे ।

क़ैसर : तुम्हारे दादा का कोई और भाई भी था ।

बूढ़ा : जी नहीं, वे अकेले थे । मैं उनका पोता हूँ और उनका वास्तविक उत्तराधिकारी । अगर कोई और दावेदार है तो वह यक़ीनन हमारी जायदाद पर अवैध क़ब्ज़ा करना चाहता है ।

क़ैसर : तुम घबरा क्यो गए । इस नौजवान को देखो । यह कहता है कि मैं सदरूस का बेटा हूँ और इस मकान का मालिक ।

बूढ़ा : ही, ही, ही, ही, हुज़ूर ! हम से परिहास करते हैं । हमारे लिए आप का परिहास गौरव की बात है । ही, ही, ही, ही.....। यह नौजवान वास्तव में पागल है ।

क़ैसर : बड़े मियाँ ! संजीदा बनो । जो पूछा जाए साफ़-साफ़ बताओ । अपनी

वंशतालिका लाओ।

बूढ़ा : बहुत अच्छा, हुज़ूर !

(बूढ़े ने घर के एक आदमी को इशारा किया। वह जाकर वंशतालिका ले आया। बूढ़े ने उसे बादशाह के सामने पेश किया। बादशाह ने तालिका को देखा, फिर कहा)

क़ैसर : यह देखो बड़े मियाँ ! तुम्हारे दादा के नाम के बराबर किसका नाम लिखा है ?

बूढ़ा : (वंशतालिका देखकर) मगर हुज़ूर, यमलीख़ा मेरे दादा का भाई, तो ला-पता हो गया था। वह तो ईसा पर ईमान लाने के जुर्म में राजमहल का कोप-भाजन बना था। इसलिए अपने साथियों के साथ भाग गया था। यह नौजवान यमलीख़ा कैसे हो सकता है ? मैं अकेला अपने दादा की जायदाद का वारिस हूँ और यह नौजवान पागल है।

क़ैसर : (अपने पुरातत्व विभाग के मंत्री से) क्या तुम बता सकते हो कि कई सौ साल पहले किस-किस क़िस्म का पोशाक पहना जाता था।

मंत्री : मैं अपनी जानकारी के अनुसार पूरे यक़ीन से कहता हूँ कि इस नौजवान का वही लिबास है।

बूढ़ा : हुज़ूर ! यह नौजवान मंत्री महोदय से मिला हुआ है और ज़बरदस्ती हमारी जायदाद पर क़ब्ज़ा करना चाहता है। कोई अक़्लमंद आदमी यह स्वीकार करने को तैयार नहीं हो सकता कि यह नौजवान कई सौ वर्ष गुज़रने पर नौजवान ही रहा।

क़ैसर : यह तो यही कहता है और सबूत में अपने साथियों को पेश करता है।

बूढ़ा : अगर यह यह साबित कर दे और एक अक़्लमंद आदमी मान ले तो मैं उसे उसका हक़ दे दूँगा।

क़ैसर थियोडोसियस ने हुक्म दिया कि बिना किसी विलम्ब के गुफा की ओर चलना चाहिए।

वह अपने दरबारियों, हकीम सदूक़ी और यमलीख़ा के घरवालों और दूसरे बहुत-से लोगों के साथ यमलीख़ा की रहनुमाई में गुफा की ओर चला। गुफा के पास पहुँचा तो कुत्ते के भौंकने की आवाज़ सुनाई दी। यमलीख़ा उसी तरफ़ बढ़ गया। सारी भीड़ उसके पीछे थी। सभी गुफा के पास पहुँचे। यमलीख़ा ने कुत्ते के सिर पर हाथ फेरा। वह चुप हो गया। फिर यमलीख़ा अन्दर गया। उसके साथी परेशान

थे। उन्होंने आशंका व्यक्त की कि वास्तव में हम सब पहचान लिए गए। आओ दुआ करें कि ऐ अल्लाह ! जब हमें फाँसी दी जाए तो हम साबित क़दम हों। ऐ अल्लाह ! हमारी ख़ताओं को माफ़ फ़रमा और हमें इस हालत में मौत आए कि हम मुसलमान ही हों।

यमलीख़ा ने सब को दिलासा दिया। हाल बताया और कहा कि न जाने क्या चमत्कार हुआ कि एक दिन में शहर और शहरवालों की काया-पलट गई। फिर उसने माजरा कह सुनाया और कहा कि बादशाह तुम्हारा इंतज़ार कर रहा है।

"नहीं, नहीं यमलीख़ा ! तुमको धोखा दिया गया। इस तरह धोखे से बादशाह हमें पकड़ना चाहता है।"

यमलीख़ा ने सबको समझाया और अन्ततः सब को गुफा के बाहर ले आया। बादशाह सब से मिला, हाल पूछा (सभी ने कहा कि यमलीख़ा ने जो बयान दिया है वही हमारा बयान है। लेकिन अब हम इस गुफा से बाहर जाना नहीं चाहते। हमें फिर नींद लगी है। और यह कह कर सलीख़ा ने यमलीख़ा का हाथ पकड़ा और अन्दर जाकर सब लेट गए और लेटते ही सो गए। फिर लाख आवाज़ें दी गईं, लेकिन वे न जागे।

अब बादशाह हकीम सदूक़ी की ओर मुड़ा और बोला, "फ़रमाइये अब आप क्या कहते हैं ?"

हकीम सदूक़ी को प्रत्यक्ष दलील मिल गई थी। उसने स्वीकार कर लिया कि हज़रत ईसा (अलै०) अल्लाह के रसूल हैं और आख़िरत का दिन भी यथार्थ है।

शहंशाह थियोडोसियस के हुक्म से गुफा को बन्द करवा दिया गया। पत्थर चुनवा दिए गए और कुन्दा करवा दिया गया कि यह उन सात नौजवानों की यादगार है जो अब से कई सौ वर्ष पूर्व इस जुर्म में वतन से भाग गए थे कि उन्होंने अल्लाह को एक और ईसा (अलै०) को अल्लाह का नबी माना था और उनका अक़ीदा था कि एक दिन ऐसा आनेवाला है जब हरेक को ख़ुदा के समक्ष अपने कर्मों का हिसाब देना होगा। और मैं, हकीम सदूक़ी और मेरी प्रजा गवाह है कि ये सातों कई सौ वर्षों तक इस गुफा में सोते रहे और फिर मैंने उनसे मुलाक़ात की।

(थियोडोसियस, रोमन सम्राट— सन् 445 ई०)

ये हैं कुछ, लेकिन ?

चाय पीते-पीते अचानक मुझे वह बात याद आ गई और मैं उसे कह देने के लिए बेताब होने लगा । आख़िर मैंने पापा से कह ही दिया, "आप को एक बात बता दूँ ?"

"ज़रूर, लेकिन अपनी अम्मी की शिकायत करनी हो तो ज़रा ठहर जाओ । उन्हें अपने कान बन्द कर लेने दो ।" पापा ने कहते-कहते मम्मी की तरफ़ देखा और मम्मी बुरा-सा मुँह बनाकर मेरी तरफ़ देखने लगीं । मैंने कहा, "नहीं पापा, मैं शिकायत नहीं करूँगा । मैं तो कह रहा था कि आज दोपहर को वे आए थे ।"

"वे कौन ?" पापा ने पूछा ।

"वही, अम्मी के वे !" और मैंने उँगली अपने सिर पर इस तरह घुमाई जैसे मैं बता रहा था कि जिन के सिर पर जटाएँ हैं और फिर अपनी दाढ़ी पर हाथ फेरकर मुँह जो फैलाया तो पापा हँस पड़े । बोले, "अच्छा, मैं समझ गया । मम्मी के वे ! तो फिर क्या बातें हुईं और कितनी दक्षिणा दी गई उनको ?"

"यह तो मैं नहीं जानता, मम्मी से ही पूछिए !"

"अगर इनकी तरह हिन्दुस्तान की सभी औरतें साधुओं पर श्रद्धा के फूल निछावर करने लगीं— तो लोग इंजीनियरिंग और डॉक्टर बनने के बजाए साधु बनने की ट्रेनिंग लेने लगेंगे और दाढ़ी-मूँछ मुँड़वाने के बजाए जटाधारी हो जाएँगे ।"

पापा ने मम्मी पर भरपूर व्यंग्य किया । लेकिन मम्मी ने बुरा न मानकर पापा को इस तरह समझाया, "धर्म की बातों में मज़ाक़ नहीं करते । वे वास्तव में पहुँचे हुए महात्मा हैं, कितना सही-सही बताते हैं आगे का हाल ।"

"उन से ज़्यादा ज्योतिष-विद्या मैं जानता हूँ मम्मी !" मैं झट बोल पड़ा । मम्मी ने घूर कर मुझे देखा । बोली, "वह कैसे ?"

"लाओ मम्मी ! दिखाओ अपना हाथ । ऐसी-ऐसी बातें बताऊँ जो सोलह आने ठीक हों," मैंने मम्मी की तरफ़ हाथ बढ़ा दिया ।

"चल हट ! तू चुपचाप चाय पी ।"

"आप मेरी ज्योतिष विद्या की क़द्र नहीं करतीं, ख़ैर, कोई बात नहीं । अरी अलका ! ला तेरा हाथ देखूँ," मैंने अपनी छोटी बहन का नन्हा-मुन्ना हाथ पकड़ लिया ।

"हाँ, तो अलका !".....मैंने सोचते हुए कहा "तेरा हाथ देखकर भेद की बातें बताऊँगा ।"

"क्या ?" पापा और मम्मी हम दोनों की तरफ़ देखने लगे ।

"अलका ! तू अपनी मम्मी की बेटी है ," पापा ज़ोर से हँसे । मम्मी भी मुस्कराने लगीं, लेकिन उनके तेवर कह रहे थे कि तू साधुओं की हँसी उड़ाता है और अलका मम्मी को इस तरह देख रही थी जैसे वह उनसे मेरी बात की तस्दीक़ कराना चाहती हो ।

"पहली मेली उमल (उम्र) ?" फिर अलका ने मुझ से पूछा ।

"अरे हाँ, तेरी उम्र तो बताना ही भूल गया ।"

"बताओ !"

"बिलकुल सच बात बताऊँ !"

"देख उट-पटाँग न बकना," मम्मी ने हिदायत फ़रमाई ।

"सच बात कहने से क्या डरना । क्यों पापा !" मैंने पापा की ओर देखा और उन्होंने सिर हिलाकर "हूँ" कहते हुए मेरा हौंसला बढ़ाया ।

मैंने कहा, "हाँ, तो अलका ! तेरे हाथ की रेखा बताती है कि जब तक तू ज़िन्दा है तब तक न मरेगी ।"

यह सुनकर अलका बहुत ख़ुश हुई । उसने जेब से एक पैसा निकाला और "लो बाबूजी दक्षिणा !" और पापा और मम्मी दोनों हँस पड़े । मैंने पैसा लेते हुए फिर कहा, "देख अलका ! ज्योतिष जो कुछ कहता है वही होता है, जैसे साधु बाबा ने बताया कि पापा की तरक़्क़ी उसी वक़्त होगी जब एक छोटा-मोटा यज्ञ किया जाएगा, मैंने भेद बता दिया और पापा सुनकर बौखला गए ।

"क्यों जी ! यह साधु क्या मेरा साहब है जो मुझे तरक़्क़ी देगा ?"

"साहब न सही, साहब का कुछ लगता होगा, क्यों है न अम्मी," मैंने भोला बन कर कहा ।

"यह क्या, तुम्हारे कारण बच्चे भी मेरा मज़ाक़ उड़ाने लगे," मम्मी ने झुँझला कर कहा, "अपनी-अपनी श्रद्धा और विश्वास है । फिर मैं जो कुछ करती हूँ तुम लोगों के ही भले के लिए तो । अच्छा अब यह बकवास बन्द होनी चाहिए ।"

"बक-बक ख़ुद करती हो !" पापा ज़ोर से बोले । उसी वक़्त अलका बोल उठी—

"पापा, छमालू के लिया ता, माँ-बाप को बच्चों के छामने ललना नहीं चाहिए । बच्चों पल बुला अछल पलता है ।"

"उसने यह भी कहा होगा कि जब माँ-बाप लड़ते हों तो बच्चों को आँखें बन्द कर लेनी चाहिए । चलो तुम दोनों अपनी आँखें बन्द करो," पापा ने डाँट पिलाई ।

"अरे हाँ, बातों में भूल ही गई । अरे ओ सुमारू ! इधर आना ज़रा" मम्मी ने नौकर को पुकारा ।

"आया बीबीजी," कहकर सुमारू सामने आया तो मम्मी ने कहा, "थोड़ा-सा गाजर का हलुवा साधु बाबा को दे आना, उनकी कुटिया पर ।"

"और उनका सामान ?" सुमारू ने याद दिलाया ।

"मैंने छः रुपये दे दिए हैं । वे ख़ुद इन्तिज़ाम कर लेंगे । तू जा ज़रा जल्दी, नहीं तो सूरज डूब जाएगा ।"

सुमारू रसोई की तरफ़ चला गया । पापा ने बड़ी संजीदगी से पूछा, "कितने रुपये दिए हैं उसको ?"

"सिर्फ़ बीस रुपये ।"

"यानी बीस रुपये में मुझे तरक़्क़ी दिलवाओगी ?"

"तरक़्क़ी की बात नहीं । साधु बाबा के मंदिर में एकादशी के दिन कीर्तन होनेवाला है । धर्म-ध्यान के लिए मैंने बीस रुपये भेंट किए तो क्या ग़ज़ब हो गया ।"

मैंने जल्दी-जल्दी चाय पी । इसके बाद कुर्सी से उठ खड़ा हुआ । मुझे खेलने जाना है ।

सुमारू ने एक प्लेट तैयार कर ली थी । वह मुझ से तीन-चार ही वर्ष बड़ा था । यही बीस-इक्कीस साल का । मम्मी उसको इसलिए पसन्द करती थीं कि वह रोज़ सवेरे पूजा-पाठ कर लेता था । एक साल होने को आया जब से वह हमारे घर का काम करता है । मम्मी के छोटे पूजाघर का पुजारी भी वही था । पहली बार जब साधु बाबा हमारे घर आए थे, तो सब से पहले सुमारू ने ही लेट कर उन्हें दण्डवत् किया था । मम्मी ने जब यह देखा तो वे खिल उठीं । उन साधु बाबा से मम्मी को इतनी श्रद्धा क्यों थी, इसकी एक वजह यह थी कि उन्होंने मम्मी के ख़ानदान के बारे में बहुत कुछ बताया था और कहा था कि मैं आप के ख़ानदानवालों को इसलिए जानता हूँ क्योंकि मेरे परदादा अपने ज़माने में आप के   के पुरोहित थे । धर्म से सम्बन्धित सभी काम उन्हीं से कराते

थे। मुझे ख़ुशी है कि तीन पीढ़ियों के बाद फिर वही रिश्ता क़ायम हो रहा है।

बाबा ने जो कुछ बताया था, वह सब ठीक था। मैं भी भौंचक्का होकर रह गया था। फिर भी न जाने क्यों वह बाबा मुझे अच्छे नहीं लगते थे। सुमारू उनके पैर दबा रहा था। बाद में मैंने उसका ख़ूब मज़ाक़ उड़ाया। वह मुझे समझाने लगा, "साधु की सेवा करने से स्वर्ग मिलता है।"

सुमारू की और सभी बातें मुझे अच्छी लगती थीं, मगर जब वह पंडिताई जताता तो मेरी त्योरियाँ चढ़ जातीं।

अब बाबाजी हर सप्ताह हमारे यहाँ आने लगे। मम्मी उनको हर त्योहार पर भोजन करातीं। एक बार बाबाजी आते ही बोले, "बेटी, तुम उदास-सी लगती हो। इसकी वजह यह है कि तुम्हारे पास कोई चिट्ठी आई है, जिसमें कोई बुरी बात है।"

मम्मी चौंक पड़ीं और बड़ी हैरत के साथ बाबाजी को देखने लगीं, "आप ने ठीक कहा बाबा !

"तुम को अपनी माँ की बीमारी की वजह से बड़ी चिन्ता है।"

"हाँ, बाबा ! यही बात है, तो क्या मैं मैके जाऊँ।"

"इतनी फ़िक्र करने की ज़रूरत नहीं।"

एक बार साधु बाबा मेरे घर आए तो मुझ से बोले, "तुमको अपनी आदतें ठीक कर लेनी चाहिएँ। तुमने सुमारू को अकारण तमाँचा मारा था। इस तरह ग़ुस्सा करने से इनसान पाप से बँध जाता है।"

पास ही खड़ा हुआ सुमारू अचानक गिड़गिड़ाकर बोला, "बाबाजी ! आप को कैसे मालूम हुआ ? मैंने उसका बुरा नहीं माना.....फिर ?"

"साधुओं से कैसे छिप सकता है ?"

"लेकिन बाबाजी ! हमारे घर की बातें आप को कैसे मालूम हो जाती हैं ?"

"बेटा ! तुम यह क्यों भूलते हो कि मैं तुम्हारे घर का पुरोहित हूँ। तुम सब की जन्म कुण्डलियाँ मेरे पास हैं, मैं ज्योतिषशास्त्र का विद्वान हूँ, योगी हूँ, तुम्हारा, सब का हाल मैं कैसे न जानूँगा।"

मैं हैरान था। हर दिन की तरह विदा करते हुए इस बार भी अम्मी ने दस का नोट उन्हें भेंट किया था। मैंने यह बात पापा को बताई और उनसे पूछा, "बाबाजी किस तरह हमारे घर की सारी बातें जान लेते हैं ?" पापा ने मेरे सवाल का जवाब

तो नहीं दिया, हाँ यह अवश्य कहा, "अब बहुत सम्भल कर रहना होगा । न जाने बाबा घर की किस चीज़ पर उँगली रख दें और तुम्हारी मम्मी वह चीज़ उसे दे दें ।"

इसके बाद शाम को मम्मी ने पापा से कहा, "वे कह रहे थे कि इस हफ़्ता में कोई दुर्घटना होनेवाली है ।"

दुर्घटनाओं की तो हमारे घर बाढ़ आई है । बाबाजी एक दुर्घटना की बात कहते हैं ।

"हमारे घर भगवान की बड़ी कृपा है, दुर्घटनाएँ हमारे यहाँ क्या ?"

"कोई एक हो तो बताऊँ । एक बड़ी दुर्घटना तो यही हो सकती है कि अगर मैं इन बाबा लोगों के बारे में कुछ तुम को बताऊँ तो घर में फ़साद बरपा हो जाए ।"

मम्मी ने बुरा-सा मुँह बनाया, लेकिन फिर सुबह-पापा को मुँह बनाना पड़ा । न जाने क्या बात थी सुबह का नाश्ता कुछ ठीक से न बना था । न चाय अच्छी लग रही थी और न पूड़ियाँ । पापा कुछ यूँ ही थोड़ा-सा खा-पीकर ऑफ़िस चले गए । दूसरे दिन दूधवाले ने रोज़ की तरह जब सुबह को 'काल बेल' दबाई तो मम्मी दरवाज़ा खोलने गईं । दरवाज़ा खुला देखकर उनका मुँह खुला-का-खुला रह गया । "मैं तो कुण्डी लगाकर सोई थी," उनकी ज़बान से निकला । फिर जब उन्होंने देखा कि दरवाज़े की बग़ल में सुमारू बँधा पड़ा है और उसके मुँह में कपड़ा ठूँसा हुआ है तो चौंक-सी पड़ीं और उन्हें ख़तरा महसूस होने लगा । मम्मी ने हड़बड़ा कर पापा को जगाया और फिर घर की हर चीज़ देखी जाने लगी । जहाँ सुमारू सोता था वहीं बग़ल में मेरी साइकिल खड़ी रहती थी । साइकिल अब वहाँ से ग़ायब थी । मैंने सुमारू के मुँह से कपड़ा निकाला तो वह रो पड़ा । उसने बताया कि रात में चोर आए थे ।

उधर मम्मी ने कहा, "दालान में सिलाई मशीन रखी थी, वह नहीं है । रसोई के बर्तन नहीं हैं । मम्मी तो जैसे पागल हो गईं । ख़ैरियत यह थी कि जिन कमरों में हम सोते थे वहाँ चोर ने हाथ नहीं मारा था । रसोईघर हमारे कमरे से अलग था । बस चोरों का छापा कमरे से बाहर ही पड़ा ।

पापा ने तुरन्त गैरेज से कार निकाली और थाने की तरफ़ चल दिए । मुहल्ले के दूसरे लोगों के साथ मैंने भी सुमारू से घटना के बारे में पूछताछ की । मालूम हुआ कि चोर छत पर से सेहन में उतरे । फिर सब से पहले सुमारू को बेबस कर दिया । इसके बाद कुण्डी खोलकर जो ले जाना था ले गए । पापा लौटे तो उनके साथ थानेदार साहब भी थें । लोगों ने उन्हें घेर लिया । थानेदार साहब ने

बयान लिए और चले गए। मैंने महसूस किया कि पापा मेरे वे पापा जो बड़े ख़ुश मिज़ाज थे, आज उनका मिज़ाज चिड़चिड़ा-सा हो गया था और उसकी वजह यही थी।

दूसरे दिन रात के वक़्त हम सब ड्राईंग रूम में बैठे थे। पापा कुछ उदास थे। मम्मी ने कहा—

"देखा, साधु बाबा ने ठीक ही कहा था कि दुर्घटना होनेवाली है।"

"भाड़ में जाए तुम्हारे बाबा का बाप!"

"अगर तुम भी कुछ ख़ैर-ख़ैरात, दान-पुण्य करते रहते तो काहे को ऐसा होता?"

"मैं कहता हूँ चुप रहो जी! अगर मैं भी ऐसा होता तो आज घर का सफ़ाया ही था।"

मैंने पापा के मिज़ाज की गरमी महसूस कर ली। सोचा कि चुप-चाप उठकर खिसक जाऊँ। अगर कहीं पापा और मम्मी का झगड़ा बढ़ा तो फिर मुझे रोना पड़ेगा। लेकिन उसी वक़्त भगवान ने नन्हीं अलका से ऐसी बात कहला दी कि उसकी जितनी प्रशंसा की जाए कम है। वह अभी तक डरी-हुई थी। बोल पड़ी, "एक मिनट पापा! पै ले अम्म इन्हें बन्द कर लें तब ललिए।" यह सुनकर पापा अपना ग़ुस्सा भूल गए और मैं भी खिलखिला पड़ा। मम्मी ने उसे भींच कर गोद में बिठा लिया। मैंने दिल ही दिल में अलका को बड़ी ही दुआएँ दे डालीं। किसी कहनेवाले ने सच ही कहा है कि कभी-कभी बच्चों की भोली बातें माँ-बाप के बड़े-बड़े झगड़ों को टालने का साधन बन जाता है।

दूसरे दिन जब सुबह साधु बाबा हमारे घर आए तो पापा घर पर थे। पापा के बारे में मैं अच्छी तरह जानता था कि वे साधुओं से लाख बेज़ार सही लेकिन अगर कोई साधु घर पर आ जाए तो वे बड़ी इज़्ज़त व एहतराम से पेश आते हैं। इसलिए बाबाजी को हाथों-हाथ लिया गया। उन्हें ड्रांईंग-रूम में बिठाया गया। मम्मी ने कहा, "बाबाजी! यह तो बड़ा ग़ज़ब हो गया।"

"मैं सब जानता हूँ।"

"आप ने अख़बार में पढ़ा होगा।" पापा ने पूछा।

"नहीं, पापा! बाबाजी ने अपने ध्यान-ज्ञान से पता लगा लिया होगा। क्यों, है ना बाबाजी," मैंने पूछा।

साधु बाबा मेरा यह व्यंग्य समझ गए। मुस्कुरा कर बोले, "ठीक है बेटा! मैं यह भी बता सकता हूँ कि तुझे साइकिल मिल जाएगी।"

"कहाँ से मिलेगी, बाबाजी ?" मैंने झट पूछा ।

"कहीं न कहीं से मिल ही जाएगी, पुलिसवाले तलाश कर ही रहे हैं ।"

"और अगर पुलिस वाले न तलाश कर सकें तो माँ-बाप ही से मिल जाएगी, क्यों बाबाजी !" पापा ने कड़ी चोट की, लेकिन बाबाजी इस बात को पी गए ।

"साइकिल कहीं कुएँ में मिलेगी," यह कहकर बाबाजी सम्भल कर बैठ गए और उन्होंने अपना आसन ठीक किया ।

उनके जाने के बाद पुलिस वाला ख़बर लेकर आया कि साइकिल मिल गई है । पूछा गया, "कहाँ मिली ?" तो बताया कि नवाब बाग़ में कूएँ के अन्दर ।"

पापाजी हक्का-बक्का होकर रह गए । मम्मी को इससे अच्छा मौक़ा और कब मिल सकता था । बोलीं, "देखा, मैं जो कहती थी कि बाबा ठीक ही कहते हैं, लेकिन तुमको विश्वास हो तब तो ।"

इस बार मैं और पापा कोई जवाब न दे सके । पुलिसवाला कह रहा था—

"देखिए, आजकल शहर में चोरियाँ बहुत होने लगीं हैं । आपको मालूम ही होगा । कल डिप्टी कलेक्टर के यहाँ भी चोरी हो गई थी । इससे पहले दो चोरियाँ हुईं । दोनों बड़े-बड़े अफ़सरों के यहाँ । ऐसे चालाक हैं चोर कि आज तक पता न चला ।"

"राम, राम ! उनकी पत्नी तो बड़ी धर्मचारिणी हैं, बड़ा दान-पुण्य करती हैं, फिर भी....."

"तुम भी तो बड़ी धार्मिक प्रवृत्तिवाली हो," पापा ने फिर व्यंग्य किया और मम्मी कुछ सोच कर चुप रह गईं ।

अब पापा हर पल फ़िक्र में रहने लगे । उन्होंने पहले तो कुछ नहीं बताया, लेकिन जब उनका तबादला हो गया तो बहुत ख़ुश हुए । तबादला का आर्डर आने से पहले यह ज़रूर उनकी ज़बान से सुना था कि इस जगह और इस शहर के लोगों से मुझे सख़्त नफ़रत हो गई है ।

सुमारू को नोटिस दे दिया गया । मम्मी तो चाहती थीं कि वह साथ चले, लेकिन पापा ने साफ़ इनकार कर दिया । सुमारू ने बताया कि अब वह अपने गाँव चला जाएगा । यहाँ न ऐसी धार्मिक प्रवृत्तिवाली मालकिन मिलेगी और न मैं रहूँगा । वह भी अपने गाँव को जाने की तैयारियाँ करने लगा ।

कार में सामान लद गया । पापा ने कार आगे बढ़ाते हुए कहा, "चलकर पेट्रोल भरवा लें ।" पेट्रोल पम्प पहुँचे तो मम्मी ने कहा, "अब इधर आए हैं तो ज़रा

और आगे बढ़ा लो, चलते वक़्त बाबाजी के दर्शन कर लें।" पापा ने मम्मी की ज़बान से यह सुना तो माथे पर शिकन पड़ गई लेकिन मम्मी की बात न टाल सके। कार का रुख़ बाबा की कुटिया की तरफ़ कर दिया। मिनट भर में कुटिया के सामने सड़क पर कार जा रुकी। हम सब उतरे। सड़क से पैदल ही कुटिया की तरफ़ चले। पास पहुँचे तो एकदम सब रुक गए। कुटिया के आगे हमारी तरफ़ पीठ किए साधु जी बैठे भाँग के दम लगा रहे थे और बग़ल में सुमारू बैठा हुआ चिलम पी रहा था—

"लो, उनकी बदली हो गई और वे चले गए।"

बस यही सुनकर हम सब लोग रुक गए और सोचने लगे कि सुमारू यहाँ क्यों ? फिर सुनाई दिया, बाबाजी कह रहे थे— "जाने दे उनको। तूने अच्छा काम किया। वैसे भी मेरे एजेंट तेरी तरह दूसरे बड़े घरानों में नौकर हैं। कहीं न कहीं फिर तुझे चिपका दूँगा।"

"मैंने समय-समय पर उस घर की एक-एक बात आप को बता दी थी। मैं समझता हूँ कि अच्छी जासूसी की मैंने, अच्छा ख़ासा बेवकूफ़ बनाया उनको।"

"यह तो हमारा धन्धा ही है।"

"गुरुजी, वह चोरी का माल बिका या नहीं ?"

"अभी तो नहीं बिका। साइकिल तो वापस हो गई। बर्तन बेचने के लिए मुरादाबाद भेज दिए गए हैं और सिलाई मशीन बरेली पुर्ज़े बदलवाने। और भी सामान है डिप्टी कलेक्टर साहब के यहाँ का और दूसरे मकानों का भी।

"गुरुजी ! मेरी हथेली में खुजली हो रही है। आज कहीं भारी रक़म मिलनी है।"

बाहर खड़े हुए मैंने और मम्मी और पापा ने ये बातें सुनीं। पापा ने दबी ज़बान से कहा, "रक़म नहीं, तेरे हाथों को हथकड़ियाँ मिलेंगी।" और यह कह कर वे वापस हुए तो मम्मी और मैं दोनों पीछे-पीछे चले। आकर कार में बैठे। पापा सीधे पुलिस स्टेशन पहुँचे, फिर क्या हुआ ?

हर व्यक्ति समझ सकता है कि अब क्या हुआ होगा। फिर पुलिस ने कुटिया पर छापा मारा। चोरी का ढेर सा-माल बरामद हुआ, फिर मुक़दमा बाबा के पूरे गिरोह का सफ़ाया—वग़ैरह।

लीजिए कहानी के आख़िर का हिस्सा संक्षिप्त करके मैंने कहानी को ख़त्म कर दिया। यह कहानी एक हिन्दी पत्रिका से ली है। इस कहानी में हिन्दुस्तान के एक रिसते हुए नासूर की निशानदेही की गई है। लेकिन हम साधु बाबा के नाम

के बदले पीर जी और उनपर विश्वास करनेवाले परिवारों के बदले किसी मुसलमान घराने का ज़िक्र कर दें तो यही कहानी इस माहौल का प्रतिनिधित्व करने लगे जो पीरपरस्त और धर्म का ज्ञान न रखनेवाले मुसलमानों का माहौल है । आप सोचिए, क्या हमारा समाज ऐसे लोगों से ख़ाली है जिनके बारे में कहा जा सकता है कि—

"ये हैं कुछ, लेकिन नज़र आते हैं कुछ !

सुलह का फ़रिश्ता

खेलते-खेलते नन्हें सईद के घोड़े की टाँग टूट गई । उसने टूटी हुई टाँग उठाई । अब देखने लगा कि यह कैसे जुड़े । वह सोचता रहा, फिर दौड़ा-दौड़ा अपनी अम्मी के पास गया । उसकी अम्मी अपने कमरे में मुँह लपेटे पड़ी थीं । "अम्मी ! इसकी टाँग टूट गई ।"

उसकी अम्मी ने एक नज़र उसे देखा । उनकी आँखों में आँसू थे । उन्होंने झिड़क देनेवाले अन्दाज़ से कहा, "मैं क्या करूँ, मेरा दिल ख़ुद टूट गया है ।"

भोला सईद कुछ न समझा । वह ज़रा देर खड़ा रहा । मतलब पूरा न होते देखकर वह अपने अब्बा के कमरे की ओर गया । उसके अब्बा आराम कुर्सी पर उदास बैठे थे । न जाने क्या सोच रहे थे । नन्हा उनके पास गया । "अब्बू मियाँ ! देखिए, यह टूट गया ।"

"तो मैं क्या करूँ ! मेरा दिल ख़ुद टूटा हुआ है ।" उसके अब्बा ने भी वही जवाब दिया । वह कुछ न समझ सका । थोड़ी देर खड़ा सोचता रहा, फिर बरामदे में आया । उसने कपड़े के कुछ चीथड़े इकट्ठा किए । अपने डिब्बे से डोर निकाल लाया । उसने टूटी हुई टाँग को टूटी हुई जगह पर रख डोर से बाँध दिया । इसके बाद घोड़े को खड़ा किया तो टाँग अलग हो गई और घोड़ा एक तरफ़ गिर गया । उसने झट हाथों पर सम्भाल लिया । वह फिर सोचने लगा ।

वह एक लोटे में पानी ले आया । बावर्चीख़ाने से थोड़ा-सा आटा लाया । आटा पानी में घोला, अपने ख़याल में उसने लेई तैयार कर ली । उस लेई से उसने टाँग को चिपका कर फिर चिथड़े लपेटे और डोर से बाँध दिया । इसके बाद घोड़े को खड़ा किया । घोड़े की टाँग फिर अलग हो गई । वह गिरने लगा तो सईद ने फिर सम्भाल लिया । बेचारा आँखों में आँसू भर लाया । वह फिर अम्मी की तरफ़ भागा ।

"अम्मी ! नहीं जुड़ता ।"

अभी उसकी अम्मी ने कोई जवाब नहीं दिया था कि आँगन से उसके अब्बा की आवाज़ आई ।

"अच्छा तो मुहतरमा ! सम्भालिए अपना घर । मैंने आप के हुक़ूक़ अदा करने में अपनी ताक़त से बढ़कर हिस्सा लिया लेकिन आपके जायज़ और नाजायज़ सारे ख़र्च बरदाश्त करना मेरे बस की बात नहीं । आपको तो किसी नवाब से शादी

करनी थी ।"

आख़िरी ज़ुमला सुन कर सईद की अम्मी तड़प गईं । उसने ईंट का जवाब पत्थर से दिया, "मेरे बाप ने तो आप ही को नवाब समझा था । क्या मालूम था कि यह नवाब ख़ज़ाने का साँप है । आप ने कब और कौन-सा अरमान मेरा पूरा किया । जब कुछ कहा, ख़ाली जेब दिखाई । आप क्यों घर छोड़ेंगे, मैं ख़ुद चली जाऊँगी ।"

"मैं ख़ज़ाने का साँप हूँ ?"

"तो आप ने नवाब से शादी करने का ताना क्यों दिया ?"

इस तरह की झड़प सुनकर सईद फिर वहाँ से अपनी धुन में भागा । अबकी बार वह अपने अब्बा के कमरे में गया । मेज़ से गोंदानी उठाई । उसने गोंद से घोड़े की टाँग जोड़ी । फिर चिथड़ों से लपेट कर तागे से बाँधा । वह अपने घोड़े को देख रहा था । वहाँ उसके अब्बा और अम्मी में तू-तू, मैं-मैं हो रही थी । सईद को इस झड़प से कोई दिलचस्पी न थी । जब आवाज़ें तेज़ हो जातीं तो वह उधर देख तो लेता लेकिन उसे अपने घोड़े की टाँग की चिन्ता थी । थोड़ी देर के बाद उसने अपने घोड़े को खड़ा किया तो वह खड़ा रहा । उस वक़्त उसने देखा कि उसकी माँ बुर्क़ा ओढ़कर बरामदे के बराबर से यह कहती हुई निकलीं, "रोज़-रोज़ की यह किचकिच और ताने कौन सुने, मेरे बाप दो रोटियों के लिए उकता न जाएँगे ।" सईद ने देखा कि अम्मी ड्योढ़ी तक पहुँच गईं ।

"मैं कहता हूँ कि इसका अंजाम अच्छा नहीं होगा ।" यह सईद के अब्बा की डाँट थी । सईद ने इस डाँट को भी अहमियत न दी । वह अपनी कामयाबी की ख़ुशी में था । उसने घोड़े की टाँग जोड़ ली थी । उसने ख़ुशी में घोड़े को उठाया और यह कहता हुआ अम्मी की तरफ़ दौड़ा—

"अम्मी ! जुड़ गई, अम्मी ! जुड़ गई । यह देखो ! यह अब नहीं गिरता ।" सईद ने ज़मीन पर घोड़े को खड़ा कर दिया," देखो, अम्मी ! जुड़ गई ना !"

वह दाद चाहनेवाली नज़रों से कभी अम्मी की तरफ़ देखता कभी अब्बा की तरफ़ । "वह जुड़ गई, जुड़ गई की रट लगाए हुए था । उसकी अम्मी के क़दम रुक गए ।

"मेरे लाल ! तूने उसकी टाँग जोड़ ली । कोई मेरा टूटा हुआ दिल जोड़नेवाला नहीं ।"

"आप ही का दिल टूटा है, मेरा तो नहीं टूटा है ना !"

सईद की अम्मी इसके जवाब में कुछ कहनेवाली थीं कि सईद बोल उठा,

"मुझे दीजिए अपना दिल ! मैं जोड़ दूँगा ।"

"तू काहे से जोड़ेगा ?"

"अब्बा की गोंदानी से !"

"अब्बा की गोंदानी से !" सईद की अम्मी एकदम हँस पड़ीं । दूसरी तरफ़ सईद के अब्बा के क़हक़हे भी कमरे में गूँज गए । वे बोले—

"हाँ, बेटे ! ले मेरी पूरी गोंदानी हाज़िर है । दोनों दिल जोड़ दे ।"

"एक ज़रा से बच्चे ने टूटी हुई टाँग जोड़ ली, इनसे दिल नहीं जुड़ता ।"

"जुड़ता क्यों नहीं, कोई जुड़वानेवाला तो हो ।" और यह कहते-कहते सईद के अब्बू मियाँ गोन्दानी लिए हुए कमरे से निकले ।

"यह खड़ा है मेरा घोड़ा अब्बू मियाँ ! अब मैं इस पर सवार हो सकता हूँ ।"

"बेटा, तेरी माँ से तो न हो सका, लेकिन तूने मेरा दिल जोड़ दिया ।" और यह कह कर सईद के अब्बू मियाँ ने उसे गोद में उठा लिया । मुस्कुरा कर बीवी से कहा, "जाओ न मैके ।"

"जाऊँगी तो सईद को लेकर जाऊँगी ।"

"क्यों ? यह मेरा बेटा है ।"

"मैं भी इससे अपना दिल जोडूँगी ।"

"लाओ अम्मी ! यहीं जोड़ दूँ ।"

"शाबाश बेटा, ठीक है ।" और यह कह कर सईद के अब्बू ने बीवी का बुर्क़ा उतार कर फेंक दिया और फिर.....?

और "फिर" का जवाब हम से न पूछिए, यह उन से पूछिए जिनके बारे में किसी शायर ने कहा है—

"बड़ा मज़ा उस मिलाप में है,
जो सुलह हो जाए, जंग होकर ।"

झूठे सहारे

आबादी से दूर—बहुत दूर—एक मैदान में जहाँ हर वक़्त आँधी और बारिश का खटका लगा रहता है, मैंने एक ढेले और पत्ते को देखा। दोनों आपस में बातें कर रहे थे। जी हाँ ! बातें कर रहे थे।

पत्ता : दोस्त, मैं आँधी से बहुत घबराता हूँ। मेरे दोस्त ! आँधी आए तो तुम मेरी मदद के लिए मेरी पीठ पर बैठ जाना। इस तरह मैं आँधी की मार से बच जाऊँगा। वह मुझे उड़ा कर न ले जा सकेगी।

ढेला : बारिश मेरी जान के पीछे पड़ी रहती है, जहाँ मुझे देखा बरस ही तो पड़ी और फिर मुझे ख़त्म कर डालती है। लेकिन दोस्त, अब मुझे काहे का डर ? मुझे तुम जैसा साथी मिल गया। तुम छतरी बनकर मुझे ढाँप लोगे। मुझे बारिश के क्रूर हाथों से बचा लोगे, समझ गए न !

मैं हैरान था कि ये बेजान चीज़ें बातें कर रही हैं और बातें भी कैसी दूरंदेशी की। दोनों बहुत अच्छे साथी हैं— लेकिन थोड़ी देर बाद— मैंने आँधी की सनसनाहट और फिर सरसराहट और फिर ख़ुनकी महसूस की। और फिर आसमान बादलों से घिर चुका था। देखते ही देखते बादल गड़गड़ाने लगे। यह सब इतनी जल्द हो गया कि मैं उसे मिनट में बाँटू तो आप उसे सपना ही मानेंगे। लेकिन सुनिए तो हुआ क्या। जब आँधी की सरसराहट हुई तो वास्तव में पत्ता ढेले से इस तरह लिपट गया कि आँधी का उसे डर न रहा और ढेले ने समझ लिया कि अब वह भी बारिश के पानी से बच जाएगा, लेकिन जब पानी बहता हुआ चला तो ढेला उससे पिघलने लगा, वह पिघल गया और फिर पानी पत्ते को बहा ले गया। इसके बाद ऐसा लगा जैसे मेरे दिल ने पुकारा—

"सब झूठे सहारे—सहारा बस एक— और वह है——ख़ुदा का।"

मेरी आँखें खुल गईं। जाने यह सपना था या जागरण। बहरहाल कुछ भी हो, मेरी आँखें खुल गईं।

(एक अंग्रेज़ी कहानी से साभार)